वीरबल

(सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास)

रामचन्द्र ठाकुर एम. ए.

('आम्रपाली', 'मीरा प्रेम दीवानी', उपन्यास के लेखक)

अनुवादक

[illegible] लाड 'दर्शन'

स्वयं चौरानरेश के हाथों, बहुमूल्य माणिक और रत्नजटित तलवार बादशाह को भेंट कराई और सन्धि को स्थायी रूप दे दिया।

शतरंज का दूसरा राजा भी बुद्धिबल से पराजित हुआ और इस तरह बीरबल ने डूँगरपुर, कालिंजर और नगरकोट के नरेशों को, अपने साम, दाम और भेद का प्रयोग करके अकबर के सम्मुख ला खड़ा किया। राज संधियों ने विद्रोह और युद्ध का मार्ग स्वयंमेव अवरुद्ध कर दिया। शतरंज के पाँचों राजा पराजित हो चुके थे; जोधाबाई के शब्दों में बीरबल ने उन्हें पराजित किया था—'अपने बुद्धि बल से!'

बीरबल की इन कार्यवाहियों के बाद बहुत शीघ्र ही "नौरोज़" का त्यौहार आ पहुँचा। उस दिन बादशाह ने भरे दरबार में बीरबल को दो हजारी मनसबदारी देकर उसे "राजा" की उपाधि से सम्मानित किया। अकबर का अभिन्न मित्र, बादशाह के दरबार का राजमन्त्री बना।

बेचारे यूसुफ़ख़ाँ का भय सच्चा सिद्ध हुआ। कविराज बीरबल, "राजा" ही नहीं, "अमीर" और "सरदार" भी बन चुका था, और अकबर के "दीवाने-ख़ास" में मुख्य सरदारों में भी मुख्य स्थान मिल गया था!

किन्तु इस बार यूसुफ़ख़ाँ के इस दुःख में सहानुभूति जताने वाले सरदार भी कम नहीं थे। उनमें से उन पाँच राजाओं के सगे-सम्बन्धी राजपूत और बहुत से परदेशी तुर्क थे!

यूसुफ़ख़ां की द्वेषाग्नि की ज्वालाओं में, उसके साथियों की सलाह, और बीरबल को दिन-प्रतिदिन मिलनेवाली सफलता, घी उँडेलने का काम कर रही थी। उसने इस अग्नि के भीषण विस्फोट से शत्रु को तार-तार कर डालने का निश्चय किया।

उसके ईर्ष्या-दग्ध मस्तिष्क में एक भीषण—अति भीषण—युक्ति का प्रादुर्भाव हुआ!

[प्रथम भाग समाप्त]

(दूसरा भाग)

बीरबल

'कहाँ जा रहे हो अतगबेग़ ?' बादशाह के ख़ास हुज़ूरिये अतग-बेग को रोकते हुए बीरबल ने पूछा, जो उसकी हवेली के प्रवेश द्वार के पास ही, सहायता के लिए आये हुए एक दरिद्र ब्राह्मण से कुछ कहकर, शाही महल की ओर जल्दी जल्दी पैर बढ़ाता हुआ चला जा रहा था। अतगबेग़, बीरबल के इस प्रश्न से चौंककर सलाम करके बोला—'ओह, राजाजी...बादशाह सलामत ने मुझे जल्द से जल्द आधा सेर ताज़ा चूना लेकर लौटने का हुक्म दिया है !'

'तो क्या बादशाह सलामत पान का शौक़ फरमा रहे थे ?' बीर-बल ने अतगबेग़ की आँखों में देखकर पूछा।

अतगबेग़, बीरबल के इस प्रश्न से स्तम्भित हो गया; आँखें विस्फारित करके बोला—'यह आपने कैसे जाना राजाजी ! मैंने ख़ुद अपने हाथों से हुज़ूर के आगे पान की गिलौरियाँ पेश की थीं।'

'इसीलिए तो ! अतगमियाँ, अब तुम एक छटाँक चूने में डेढ़ पाव मक्खन मिलाकर ले जाओ ! जहाँपनाह ने तुम्हें खिलाने के लिए ही चूना मँगाया है, समझे ! तुमने हुज़ूर की गिलौरी में ज़्यादा चूना लगा दिया जान पड़ता है।'

इस तरह अचानक अपनी जान छूटी देखकर, अतगमियाँ, बीरबल को धन्यवाद देकर कृतकृत्य होता हुआ जल्दी जल्दी चला गया।

वैसे तो अतग मियाँ, अपने साथी कल्याणमल का घनिष्ट मित्र था और उसके घनिष्ट मित्र की मूँछे मुड़ जाने के बाद उसके हृदय में भी बीरबल के लिए घृणा और विद्वेष की भावना कई गुनी बढ़ गई थी। बीरबल के प्रति विद्वेष की इस तरह वृद्धि देखकर, यूसुफ़ख़ाँ ने अतग-बेग को भी अपने कुचक्र जाल में समेटकर बीरबल के विरुद्ध भयंकर पाठ पढ़ा दिया था। किन्तु आज की इस छोटी-सी घटना से ही, पूर्व के समस्त द्वेष-विद्वेषों को बहाता हुआ, श्रद्धा का एक विमल स्रोत, अतग-

सियाँ के हृदय में फूट निकला और उसने मन ही मन यूसुफ़ख़ाँ के साथ साथ कल्याणमल को भी गिन गिन कर गालियाँ देना शुरू कीं।

आज राजाजी को 'राजाजी' बने पूरे चार वर्ष हो चुके थे। बीरबल आज अकबर की मूँछों का बाल था—ये उसके शत्रु भी स्वीकार करते थे। इन चार वर्षों की अवधि में उसने बादशाह के हृदय में जितना स्थान पाया था उतना ही प्रजा के हृदय में भी। उस के दान धर्म, बादशाह के हृदय में उसके प्रति अगाध प्रेम और उसके बुद्धिचातुर्य की ख्याति, फतहपुर सीकरी में ही नहीं, अकबर के साम्राज्य के एक कोने से दूसरे कोने तक—नहीं, साम्राज्य से भी बाहर ईरान के राजदरबार तक फैल चुकी थी। आज तो बादशाह की साधारण बेग़म से लेकर, शहर के श्रमजीवी तक अपने दुःखों का निवारण करने और किसी समय कुपित बादशाह के क्रोध को ठण्डा करने के लिए बीरबल के पास दौड़े चले आते थे।

कल की ही बात ले लीजिए—जोधाबाई और छोटी बेग़म के बीच बात ही बात में एक बात छिड़ गई। कुछ ही समय पहले मथुरा के एक प्रसिद्ध वैद्य ने घोषणा की थी कि वह जाड़े की सर्द रात में, जमुना के जल में सारी रात खड़ा रहकर सवेरे भलाचंगा बाहर आ सकता है। छोटी बेग़म को यह घोषणा कोरी गप्प मालूम हुई, और जोधाबाई ने भी स्वीकार किया कि यदि उसकी बात झूठी सिद्ध होगी तो वह एक लाख रुपये, शर्त के अनुसार उस वैद्यराज को देगी। बेग़मों की आज्ञानुसार बेचारा वह अकिंचन ब्राह्मण वैद्य, हृष्ट पुष्ट मुग़ल सिपाहियों के पहरे में जाड़े की बर्फ़ीली रात में, जमुना के सदा शीतल जल में खड़ा रहा।

दूसरे दिन सवेरे वे ब्राह्मण वैद्यराज "जलपरीक्षित" होकर छोटी बेग़म के सम्मुख आ खड़े हुए; किंतु छोटी बेग़म ने एक "अदनी-सी" बात के लिए शाही ख़ज़ाने में से एक लाख रुपये निकालना उचित न समझा; बादशाह को दूसरी बातों से बहकाकर बेचारे निर्धन ब्राह्मण को,

एक कौड़ी भी न देकर उसने उसे महल से बाहर निकलवा दिया। अनाश्रित ब्राह्मण सीधा बीरबल की हवेली की देहली पर अपना सिर पीट पीट कर रोने लगा—'राजाजी मैं तो एक निर्धन वैद्य हूँ; बड़ी कठिनाई से जीवन भर की कमाई से यह अमूल्य औषधि बनाई थी; बादशाह प्रसन्न होंगे इस आशा से मैंने अपना सब कुछ इस औषधि में लगा दिया था—मेरे पास एक कौड़ी भी नहीं रही। यह पीकर ही मैं सारी रात जमुना के ठंडे जल में खड़ा रह सका था। अब हुक्म हुआ है कि बतलाया हुआ इनाम नहीं मिलेगा।'

'तो तुम सारी रात जमुना में खड़े नहीं रहे ?'

'राजाजी, सूरज के दर्शन करके ही मैं शाही महल के बाहरवाले बड़े हौज़ में से बाहर निकला—सारी रात एक ख़ास मुग़ल सिपाही मुझपर पहरा देता रहा। सबेरे बादशाह सलामत ने पूछा कि 'तू सारी रात पानी में खड़ा रहा है, इसका कोई दूसरा सबूत दे। मैंने कहा, आपके शयनगृह में सारी रात अभ्रक की एक रंगीन हाँडी में दीया जलता रहा। बादशाह ने कहा, तो तू उसी दीये की गर्मी से सारी रात पानी में खड़ा रह सका था, इसमें कौन सी बड़ी बात है ? आप ही सोचिये राजाजी, भला शयनगृह के उस दीये की गर्मी बाहर के हौज़ तक पहुँच सकती है ?...और दीया पास में भी हो तो भला उसकी गर्मी का कुछ असर हो सकता है ? यही कहकर छोटी बेग़म साहबा ने मुझे महल से बाहर निकलवा दिया।'

'अच्छा, ठीक है; तुम घर जाओ। रुपये तुम्हें मिल जाएँगे।' कुछ सोचकर राजाजी ने कहा। उसने सोच लिया कि बादशाह ने बेग़म को प्रसन्न करने के लिए निर्धन ब्राह्मण से यह विनोद किया है। उसे छोटी बेग़म के साथ उससे भी बड़ा विनोद करने की इच्छा हुई। अपने कक्ष में पहुँचकर उसने शाही पोशाक उतार दी और एक स्वच्छ धुली हुई सफ़ेद धोती पहनने लगा।

उमा ने तनिक चौंककर पूछा—'यह क्या कर रहे हो ? कचहरी नहीं जाना है क्या ?'

'नहीं, मुझे भूख लगी है; मैं खिचड़ी खाऊँगा—और अपने ही हाथों पकाकर !' बीरबल और कुछ न कहकर पीछे वाले बगीचे में चला गया।

उमा, पति के विचित्र व्यवहार पर सिर से हाथ लगाकर खड़ी रही—'पतिराज को भोजन किये एक घड़ी भी नहीं बीती और फिर भी खिचड़ी बाकी है, और अपने ही हाथों से पकाकर ! कहीं मस्तक तो नहीं...!' यदि बीरबल के छोटे से सुपुत्र हरि ने उसका आँचल न खींचा होता तो वह उसी तरह मूर्तिवत् जाने क्या क्या सोच डालती। हरि ने अपनी तोतली बोली में व्यक्त किया—'माँ, मुझे भूख लगी है!'

'तुझे क्यों न लगे ? तेरे बाप को पेट भर जाने के बाद भूख लगी है तो तुझे भी भूख क्यों न लगेगी ?'

'वाह बेटा !' जाने किस कोने से पुराणी चाचा का उद्गार सुनाई दिया। अुमा कुछ संकुचित-सी होकर लड़के को लेकर भीतर चली गई।

बादशाह के दोपहर के भोजन के समय बीरबल और फ़ैजी नियमित रूप से महल में हाज़िर रहते थे, किन्तु दोपहर से अधिक समय हो जाने पर भी बीरबल नहीं आया तो बादशाह की उत्सुकता बढ़ी। उसने अतगबेग से बीरबल को बुलवाने भेजा। बीरबल हवेली शाही महल से अधिक दूर न थी फिर भी वह कुछ देर करके आया और नीचे की ओर देखता हुए बोला—'हुज़ूर, बीरबीलजी की खिचड़ी तैयार हो रही है; उन्होंने भोजन करके हुज़ूर की ख़िदमत में हाज़िर होने की आज्ञा माँगी है !'

बादशाह ने आधे मन से बीरबल की विनती स्वीकार की। किंतु दूसरी बातों में समय बिताने पर भी सन्ध्या होने में अधिक देर न रही।

बादशाह अभी तक "दीवाने ख़ास" में बीरबल की प्रतीक्षा कर रहा था, क्योंकि ऐसी कई राजनैतिक गुत्थियाँ सुलझानी थीं जिनकी चर्चा बीरबल की उपस्थिति के बिना अधूरी जान पड़ती थी। जब से महेश बीरबल बना था तब से उसने बादशाह के सम्मुख हाज़िर होने में एक क्षण का भी विलम्ब नही किया था, इसलिए बादशाह की उत्सुकता, इस समय तक अत्यधिक बढ़ जाना स्वाभाविक ही था। अन्त में अबुल-फ़ज़ल और फ़ैज़ी भी प्रतीक्षा से ऊबकर, "मक़तब-ख़ाने" में लिखी जाने वाली पुस्तकों का निरीक्षण करने चले गये।

जब चौथी बार अतग़बेग बादशाह के हुक्म से बीरबल को बुला कर वापस लौटा तो उसी तरह सकुचाकर बोला—'जहाँपनाह खिचड़ी तैयार हो रही है। बस भोजन करके राजाजी पधारते ही होंगे!'

'ऐसी कैसी खिचड़ी है जो सारा दिन हुए पकती ही नहीं?' बादशाह ने दहाड़ कर पूछा। अतग़बेग दो डग पीछे हट गया। बादशाह का धैर्य सीमा पार कर चुका था। क्रोध में उसने और अधिक बोलने की शक्ति खो दी थी। सब जानते थे कि स्वयं बादशाह अपने राजमन्त्रियों, यहाँ तक कि दासदासियों को भी अपने लिए व्यर्थ प्रतीक्षा करने देना अनुचित समझता था। और आज यह राजा बीरबल, सारे दिन से अकबर से प्रतीक्षा करा रहा है! बादशाह को सन्देह हुआ कि बीरबल, उसकी अतिशय मैत्री-भावना का दुरुपयोग कर रहा है! बीरबल के इस कृत्य में उसे बे अदबी और लापरवाही की झलक दिखाई दी। और अधिक सोचने का धैर्य उसमें न रहा, पास ही पड़ी हुई तलवार हाथ में लेकर वह राजाजी की हवेली को जाने के लिए तैयार हो गया। छोटी बेग़म, जो पास ही के कक्ष में थी, फूली न समाई। उसने बादशाह को तैयार करने में मदद दी।

महल के प्रत्येक प्राणी को आश्चर्य में डालकर अकबर बादशाह, एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ की मुट्ठी में क्रोध को मसलता हुआ पैदल ही राजा बीरबल की हवेली की ओर रवाना हुआ। अतगबेग

अपनी घबराहट छिपाकर बादशाह के पीछे दौड़ा चला जा रहा था; अपने श्वास-प्रश्वास की तीव्रता के साथ उसके प्राण भी कंठ तक आ पहुँचे थे। वह बादशाह की रग रग से परिचित था; अपने साथ ही साथ दौड़ते हुए कल्याणमल को आँखों के इशारे से समझा दिया कि आज राजा बीरबल की ख़ैर नहीं है! कुछ ही क्षणों के बाद बादशाह बीरबल की हवेली के पीछे वाले बग़ीचे में आ खड़ा हुआ। और वहाँ का वातावरण देखकर उसी तरह मूर्तिवत् खड़ा रह गया!

सचमुच बीरबल धुली धोती पहन कर खिचड़ी तैयार करने में मग्न था, किंतु बादशाह के आश्चर्य का कारण उसकी खिचड़ी पकाने की विधि थी—बीरबल ने एक बहुत बड़े बाँस को सीधा आसमान में खड़ा करके उसके ऊपरी सिरे से दो बालिश्त दूर कुछ कंडे-लकड़ी सुलगा रखे थे, पूरी तरह नहीं सुलगने के कारण उन में से धुंआ निकल रहा था। बादशाह के आगमन का आभास होते ही बीरबल ने ईंधन को और जोरों से फूँकना प्रारम्भ कर दिया। बीरबल के इस नाटक ने बादशाह को एक भी क़दम न बढ़ाने और वहीं खड़े रह कर सोच में डाल देने के लिए विवश कर दिया। उधर पुराणी काका बादशाह को देखते ही सब नशा भूल बैठे; उन्हों ने जल्दी जल्दी में एक सोने से पड़ी हुई चौकी लाकर बादशाह के सामने रख दी। उसी पर बैठ कर अकबर ने कुछ देर बीरबल को फूँकने दिया, फिर बिना किसी सन्दर्भ के अति स्वाभाविक ढंग से पूछा—'यह किस बात का प्रयोग कर रहे हो राजाजी?'

बीरबल ने दोनों हाथों से आँखें मलते हुए खड़े होकर उत्तर दिया—'हुजूर, आज का मेरा व्रत है कि अपने ही हाथों से खिचड़ी पका कर खाऊँ!'

'तो तुम्हें विश्वास है कि इस तरह हँड़िया को पच्चीस गज़ ऊँची लटकाकर, नीचे से आँच लगाने से हँड़िया का पानी खौल उठेगा?'

'क्यों नहीं हुजूर!—आप देखिये तो सही। बस अब खिचड़ी तैयार ही समझिए!'

'बिलकुल असम्भव ! नामुमकिन !!' बादशाह ने जबर्दस्ती क्रोध दबाकर कहा । अतगमियाँ और कल्याणमल के प्राण कंठ तक आ पहुँचे; उन्हें बादशाह के हाथों किसी भीषण कृत्य के हो जाने का दृढ़ विश्वास होचला । अतिशय कुपित होने पर भी बादशाह के इस तरह शान्तिपूर्वक खड़े रहने का और क्या अर्थ हो सकता था ?....

किंतु बीरबल पर बादशाह के इस व्यक्तीकरण का तिलभर भी असर न हुआ, यद्यपि वह बादशाह के स्वभाव को, उसके हुज़ूरियों को अधिक अच्छी तरह समझता था । उसने बादशाह के ही सामने दृढ़ता और शांतिपूर्वक कहा—'जहाँपनाह, अगर दो सौ गज से एक दीया हौज़ के ठंढे पानी में खड़े हुए ब्राह्मण को गर्मी पहुँचा सकता है, तो एक बाँस ऊँची हँड़िया को इन कंडों की आँच नहीं लगेगी ? अवश्य लगेगी हुजूर !'

विद्युत-स्पर्श की तरह एक ही झटके में बादशाह की आँखें खुल गईं । उसे अपने विनोद का स्मरण हो आया; दबाये हुए क्रोध का उफ़ान विनोद के शीतल प्रवाह में विलीन हो गया । उसने धीमे स्वर में कहा—'अतगमियाँ, खजांची से जाकर कहो कि कल वाले ब्राह्मण को एक लाख रुपये बख़्श दिये जायं !'

'ब्राह्मण और रुपये दोनों तैयार हैं हुजूर !' पास ही में खड़े हुए ख़जांची ने कहा ।

'तो जाओ, इसी वक्त इनाम चुका दो उसे !'

'जहाँपनाह, मक़तबख़ाने में जाने का वक्त हो चला है !' जाते जाते ख़जांची ने बादशाह को याद दिलाया।

'कहला दो, खिचड़ी तैयार है—खाना खाकर आता हूँ !'

'लेकिन हुजूर, यह खिचड़ी....' ख़जांची और कुछ न कह सका ।

'राजाजी, थोड़ी मुझे भी दिजिये—ज़्यादा हिस्सा आप लीजिये । ...आज मैं खिचड़ी खाये बग़ैर यहाँसे टलनेवाला नहीं!

बेचारा बीरबल उत्तर में एक शब्द भी न बोल सका।

किंतु जब रात को छोटी बेगम, दिन की अनहोनी घटना से अवगत हुई तो शाही वंश के सारे "शानदार" लोग जल उठे! बादशाह सलामत जो दिन में सिर्फ़ एक बार खाना खाते हैं, कुपित होकर जब बीरबल की हवेली में गये तो नतीजा निकला, उस निकम्मे ब्राह्मण के साथ धरती पर बैठकर खिचड़ी खाई जाय! किन्हीं ख़ास मौक़ों पर बादशाह, अमीर-उमरावों के यहाँ पधारते भी थे, लेकिन यह तो कोई अवसर नहीं था, कोई ख़ास बात नहीं थी! तिस पर हिन्दुस्तान का सम्राट एक ब्राह्मण से माँगकर खिचड़ी खाये! हद हो गई थी अब तो! आज छोटी बेगम की सालगिरह थी; बादशाह ने उसके लिये कई खूबसूरत सौगातें भेजी थी, और खुद छोटी बेगम के महल में तशरीफ़ लाने वाले थे, वे सब बातें क्या हुईं? बादशाह की नजर में अपनी बेगम से ज्यादा कीमत उस ब्राह्मण की है!....

छोटी बेगम की क्रोधाग्नि में और घी उँड़ेला जाने लगा, जब बादशाह ने अबुलफ़जल, फ़ैज़ी और बीरबल के साथ सारी रात मक़तब-ख़ाने में ही गुजारी! उसके पहले बादशाह ने शाम को ही कहला दिया था कि महल में रात को नहीं आ सकेंगे। किंतु बेगम को उम्मीद थी कि बादशाह एक बार अवश्य आएँगे, पर वे न आये!.... छोटी बेगम के क्रोध की अपरिमित मात्रा, आँसू बनकर आँखों से बहने लगी; सारी रात में कई बार वह फफक फफक कर रो पड़ी—क्यों बादशाह ने उससे ऐसा बर्ताव किया? बीरबल के लिए?... उसे यूसुफ़ख़ाँ की प्रत्येक बात बिलकुल सच्ची प्रतीत हुई—बीरबल भीषण है, इसमें आज उसे तिल-भर भी सन्देह न रहा। जो आदमी बेगम से बादशाह को अलग रखे, वह भीषण नहीं तो और क्या हो?

यकायक जाने कैसे, उसी समय यूसुफ़ख़ाँ वहाँ आ पहुँचा; बोला—'बहन, एक साल पहले बादशाह सलामत के लिए गुलिस्ताँ और बोस्ताँ को नजरों के सामने से हटाना जहर मालूम होता है और

आज के राजा बीरबल के कहने से, बड़े चाव से सिंहासनबत्तीसी सुन रहे हैं!'

बेगम ने सुना, किंतु क्रोधी के उद्वेलन ने एक शब्द भी उसके मुँह से न निकलने दिया। बेगम के इस मौन से भयभीत होकर यूसुफ़ उल्टे पैरों वहाँ से चला गया। वह सारी रात बादशाह ने सिंहासनबत्तीसी का फ़ारसी अनुवाद सुनने में बितायी और उधर छोटी बेगम अपने क्रोध और अपमान के अनुभव से त्रस्त हो होकर तड़पती रही!

किंतु प्रभात की अरुणिमा को देखकर बेगम की आँखों की जागरण की लालिमा कई गुनी बढ़ गई। क्रोध और विवशता के भीषण उफान में वह अपने धैर्य का बाँध खो बैठी; बादशाह को देखने के लिए वह तड़प उठी! जोधाबाई से बदी हुई शर्त का विनोद, तिगुनी वेदना देकर उसके हृदय में कसक रहा था—वह जोधाबाई से हार गई, बादशाह ने सारी रात उसकी उपेक्षा की, और बीरबल की तुलना में वह कुछ भी नहीं! दोपहर के भोजन के बाद बादशाह के विश्रान्ति कक्ष में वह जबरन आ खड़ी हुई, और बादशाह के साथ साथ अपने हृदय को देख कर वह जोरों से रो पड़ी।

बादशाह की दस बेगमें थीं, किंतु वह सबों को वह उन के कुल-स्वभावानुसार समान रूप से चाहता था, कोई अनचाही बेगम न थी। सामान्य वंश से आई हुई छोटी बेगम के लगातार आँसुओं ने अक़बर के मस्तिष्क और हृदय को स्तंभित कर दिया। उसने प्रेमपूर्वक बेगम का हाथ अपने हाथों में लिया; किंतु बादशाह के स्पर्श ने उसके रुदन को कई गुना बढ़ा दिया; वह सिसकियों में बोलती रही—जिधर देखिये बीरबल के ही गुण गाये जाते है; रुपये आप देते हैं और नाम राजा बीरबल कमा रहे हैं। पहले से आप यूसुफ़ को अपना दामाद समझ कर अपनी मेहरबानियाँ उस पर बरसाते रहते थे, लेकिन जब से आपकी नजरों में यह हिंदू आ समाया है, यूसुफ़ को आपने बिलकुल नीचे धकेल दिया है!'

अकबर बहुत ध्यान-पूर्वक बेगम के उबलते हुए उद्गारों को सुनता रहा, फिर हँस कर बोला—'तो क्या बेगम साहिबा बादशाह को इतना बेवकूफ़ समझती है कि वह हर किसी की बातों में आ जायगा? सुनो बेगम, ख़ुदा ने मुझे बादशाह बनाया है, और बादशाहत चलाते वक्त मैं हिन्दू को हिन्दू और मुसलमान को मुसलमान नहीं समझता! मैं अपनी रैयत के हर एक शख़्स को सिर्फ़ हिन्दुस्तानी समझता हूँ।'

'लेकिन मेरे मालिक, आप यूसुफ़ की लियाकत तो देखिये। सब जानते हैं कि वह बेचारा बरसों से नमकहलाल की तरह आपकी ख़िद-मत बजा रहा है, और राजाजी से किसी बात में कम नहीं है। उस पर भरोसा रखकर उसकी बात आपको सुननी चाहिए, क्योंकि वह आपके मजहब वाला है इसलिए कभी ग़लत रास्ते पर...'

'मज़हब?' बेग़म की बात काट कर बादशाह बोल उठा; उसने तीक्ष्ण दृष्टि से बेगम की आँखों में देख कर पूछा—'मज़हब? मेरा मजहब?'

बादशाह ने और कुछ न पूछा। बेगम अवाक होकर उसे देखती रही। यकायक किसी भीषण आशंका से उसका हृदय काँप उठा। बादशाह के अति प्रिय मित्र बीरबल के विरुद्ध वह जाने क्या बोल चुकी थी!

(१४)

प्रभात हुआ। अकबर ने शान्त-स्वर में जोधाबाई से पूछा—'महारानी, मज़हब क्या है?'

'बिना किसी को दुःख पहुँचाये, आत्मा को ऊंचे उठाने का रास्ता!'

'सही है।' बादशाह ने और कुछ न पूछा।

दोपहर हुई। अकबर ने तनिक उत्कण्ठित स्वर में शायर फ़ैज़ी से पूछा—'शायर, मज़हब क्या है?'

'दिल !'

'सही है; इसीलिए मज़हब और मुहब्बत सगे भाई-बहन कहलाते हैं।' बादशाह ने और कुछ न पूछा।

साँझ हुई। अकबर ने दृढ़ स्वर में, रामायण के फ़ारसी भाषान्तरकार, इस्लाम के कट्टर धर्मानुयायी अब्दुलक़ादर बिदौनी से पूछा—'मौलाना, मज़हब क्या है?'

'क़ुर्बानी !'

'सही है !' बादशाह ने और कुछ न पूछा।

रात हुई। फ़तहपुर सिकरी की एक अन्धेरी गली में जमालमियाँ ने क़मालमियाँ से पूछा—'राजा, मज़हब क्या है?'

'महाभारत, महाबली !' हाथ जोड़कर बीरबल ने व्यक्त किया।

'जमाल कहो !' आपने छद्मवेश की ओर संकेत करके अकबर ने बीरबल को होश दिलाया। बीरबल ने—मतलब कि, क़माल ने—स्वस्थ होकर, जमाल का हाथ अपने हाथ में लेकर चलते चलते कहना शुरू किया—'जमाल मियाँ, धर्म का ही दूसरा नाम महाभारत है। हिन्दुस्तान के हिन्दुओं का महाकाव्य अगर रामायण है, तो उनका जीवन-धर्म महाभारत है।'

'वही न जिसका एक हिस्सा गीता कहलाता है?'

'हाँ जमाल मियाँ, वही है महाभारत में! आपके कहे गये "मज़हब" अर्थात् "धर्म" का संसार में अधिक से अधिक दुरुपयोग किया गया है! इसी "धर्म" शब्द ने पाप को उत्तेजित कर के पुण्य को रौंद रौंद कर कुचला है। जमाल मियाँ सच कहता हूँ, आज तक वस्तुतः धर्म को कोई भी न समझ सका। स्त्री का धर्म अलग है, पुरुष का अलग, राजा का धर्म भिन्न है तो प्रजा का भी कोई भिन्न धर्म है। धर्म का मतलब है जीवन धर्म जीने की कला—जिसके उत्तमोत्तम उदाहरण, प्रत्येक दृष्टिकोण से "महाभारत" में विद्यमान हैं। यदि धर्म का अर्थ केवल "धर्म"

ही कोई समझता हो तो उसे समझाने के लिए महाभारत के अन्तर्गत गीता, सबों के लिए तैयार है !'

'राजा का धर्म....!' बादशाह बुदबुदाया—'कमाल मियाँ, मैं महाभारत सुनूँगा ।'

दूसरे ही दिन, अत्यधिक प्रतीक्षा के बाद अंत में पंडित देवी मिश्र को उनका इच्छित अवसर मिला और नवागन्तुक पंडित जगन्नाथ ने बादशाह को महाभारत सुनाना प्रारंभ किया ।

और आज मक़तबख़ाने में भीड़ और हो-हल्ले का यह हाल था कि, अरबी पुस्तक "हयातुल हैवान'; यूनानी "समरतुल-फलासफल" अंधेरे पीरकृत "ख़ैरुल-बयान; मकल्लम खाँ गुजराती कृत "ताजक"; फ़ैज़ी कृत नुक़्ता-रहित क़ुरान की टीका "सवाते-उल-इलहाम" और हकीम हमाम कृत बहुप्रशंसित पुस्तक "मुअज्ज-मुल-बलराम" के फ़ारसी अनुवाद और पठन के समय सब मिला कर भी जितना शोर-गुल नहीं हुआ था उस से अधिक भीड़ और चहल पहल आज महाभारत की कथा के समय हुई थी ।

तब महाभारत के पठन के प्रारंभ के साथ ही यूसुफ़ खाँ को भी अपने प्रतिद्वन्दी बीरबल को जड़-मूल से उखाड़ देने और अपने आपको निर्दोष बनाये रखने का एक नया मार्ग मिल गया । वह अपने शत्रु पर "धर्म-द्रोह" का भीषण आरोप लगाना चाहता था । उसने अपनी इस नई सूझ के साथ ही निश्चय कर लिया कि वह धर्म के नाम पर ऐसे अनेकों सरदारों और अमीरों को अपनी ओर मिला लेगा, जो हृदय से पवित्र और प्रामाणिक होते हुए भी "तलवार या क़ुरान" के सिवा तीसरी वस्तु को हाथ में लेना धर्म-द्रोह समझते हैं । वह सिद्ध करा सकता था कि यह हिंदू राजा बीरबल अक़बर बादशाह के हृदय की विशालता और उदारता का दुरुपयोग कर के अनर्थ का सृजन कर रहा है, इस बात को वह बुद्धि के साथ साथ हृदय से भी स्वीकार करता था किंतु इस समय उतावली करना उसे उचित प्रतीत न हुआ इसलिए उसने अति धैर्य्य पूर्वक अपना कूटनीतिपूर्ण खिलवाड़ जारी रखा ।

महाभारत के पठन के दिन से ही यूसुफ़ख़ाँ ने प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया कि राजा बीरबल अब बादशाह को मज़बूती के साथ हिंदू धर्म की ओर घसीट रहा है; उस ने दो तीन ऐसे उदाहरण दिये जिन में बीरबल का ज़रा भी हाथ न होते हुए भी धर्म के नाम पर उन आरोपों को बीरबल के मत्थे मढ़ा जा सकता था। पहला उदाहरण यह था कि दक्षिण-भारत का एक विद्वान ब्राह्मण जब स्वेच्छा से मुसलमान बन गया और उस ने अपनी इच्छा से अथर्ववेद का फ़ारसी भाषान्तर करना शुरू किया तो यूसुफ़ ने कहा कि बीरबल ने जबर्दस्ती एक मुसलमान को हिंदूपने की तरफ घसीटना शुरू किया है। दूसरे जब धर्मांध बिदौनी, शाही फरमान के वश होकर "सिंहासन-बत्तीसी" का फ़ारसी भाषान्तर करने लगा तो यूसुफ़ के द्वारा यह आरोप भी बीरबल के सिर ही मढ़ा गया। तीसरे, जब अपने बुद्धिबल से शेख़ फ़ैजी और अबुल फ़ज़ल संस्कृत-साहित्य के मर्म को अच्छी तरह समझने लगे तो उन्होंने अपना सारा समय संस्कृतसाहित्य के पठन और शोधन में ही व्यतीत करना प्रारंभ कर दिया; यह साहित्य-प्रियता थी, यूसुफ़ के शब्दों में बीरबल ने जगाई थी!...

महाभारत की बात को लेकर धर्मान्ध सरदारों और अमीरों के हृदय में यूसुफ़ खाँ ने सफलता से ज़हर फैलाना शुरू कर दिया। छोटी बेगम का प्रोत्साहन उसे मिल रहा था और अब्दुल्ला और नासीरख़ाँ जैसे लड़ाकू, बिदौनी के समान विद्वान उसके साथ थे। धर्मान्धों का सन्देह दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा और सन्देह की औषधि तो धन्वन्तरी और लुक़मान के पास भी नहीं मिली। तो नये और पुराने तुर्की, फारसी और हिन्दुस्तानी मुसलमान, हिन्दुओं के धार्मिक हस्तक्षेप और जबर्दस्ती बादशाह के मन को हिन्दू धर्म की ओर खींचने के लिए क्यों न कोसते? ...मुसलमान सरदारों का सारा गिरोह बीरबल, हिन्दूधर्म और बादशाह के प्रति सन्देह, घृणा और द्वेष से प्रज्वालित होने लगा। विरोध की घुटती हुई भावनाओं के बीच किंतु उस से अप्रभावित रहकर एक दिन महाभारत का पाठ सम्पूर्ण हुआ और दूसरे दिन से अक़बरी दर-

बार के नामचीन विद्वानों—फ़ैज़ी, क़ुलहउल्ला, अबुलफ़जल, बिदौनी, कृष्ण ज्योतिषी, गंगाधर, महेश महानन्द आदि—ने अति परिश्रम पूर्वक महाभारत का फ़ारसी भाषान्तर प्रारंभ किया और अत्यल्प अवधि में उसे सम्पूर्ण कर दिया। शेष अब्बुलफ़ज़ल ने महाभारत के फ़ारसी भाषांतर की प्रस्तावना लिखी और उसका फ़ारसी नाम "रजबनामा" अथवा "ज़रमनामा" रखने का निश्चय हुआ।

× × ×

'पर अचरज को बात तो यह है कि सभी इस किताब की खुले आम तारीफ़ करते हैं! अब्दुल्ला ने यूसुफ़ खाँ से अपना चाटुकारी पूर्ण उदगार व्यक्त किया, जो शाही महल के एक एकान्त कोने में भरा बैठा था; उस के द्वेष और दुःख के साथी सरदार उसे घेरकर खड़े थे।

'तिस पर मजा यह कि एक बार ख़त्म कर चुकने के बाद उसे बादशाह सलामत ने पलटा पलटा कर तीन बार सुना है!' नासीर खाँ ने हृदय की सम्पूर्ण कटुता जीभ पर लाकर कहा।

'बस बादशाह सलामत की राह देखी जा रही है, उधर मक़तब खाने के दरवाज़े पर शेख़ साहब उसका फ़ारसी तर्जुमा लेकर ही खड़े होंगे!' रतन सिंह ने जलकर कहा।

'ख़ानसाहब, आप मेरी बात सच मानिये, यह एक बहुत बड़ी चालबाज़ी है, सिर्फ राजा बीरबल की चालबाज़ी है!'

'भाइयो, हर चीज़ की हद होती है, लेकिन इस शैतान ने हद को बेहद बना दिया है और ख़ुद बेहद बनता जा रहा है। दोस्तो! मैं ख़ुदा का बन्दा और तुम लोगों का गुलाम हूँ, मैं कहता हूँ यह शैतान राजा, बादशाह को ही नहीं, उनकी बादशाहत को भी धूल में मिला देगा, लेकिन मैं ऐसा न होने दूँगा—हम यह नहीं होने देंगे! भले ही हम बरबाद हो जाएँ, लेकिन बर्बादी की इस जड़ को उखाड़ कर ही दम लेंगे!.......यह नाचीज़ हाथ मेरी इसी बात का अमल करेगा!' यूसुफ़ ने क्रोध में काँपकर, अपनी काँपती हुई दाहिनी भुजा को देखा।

'आहिस्ता, मालिक, आहिस्ता !' यूसुफ़ के जोश को ठंडा करने का प्रयत्न करते हुए अब्दुल्ला ने कहा—'धीरे बोलिये !'

'तलवार से पहले दिमाग़ से काम लेना बेहतर है ।' रतनसिंह ने धीरे से कहा ।

'तो तुमने भी राजा के बोल ज़बानी कर लिये हैं क्या ?'—तनिक खीझकर नासिरख़ाँ ने पूछा ।

'नहीं तो; बादशाह सलामत रोज़ रोज़ फ़रमाते हैं वही तो मैंने कहा जनाब—' यकायक राजाजी को देखकर रतनसिंह का वाक्य अधूरा ही रह गया । दरबार का समय हो रहा था इसलिए बीरबल उधर ही जा रहा था । बीरबल को आते देखकर चालाक अब्दुल्ला ने आवाज को बदलकर बहुत ही मीठे लहजे में कहा—'आदाबर्ज़ राजाजी, पधारिये ।' हिन्दू-तुर्क सरदारों ने भी नमस्ते करके बीरबल को सम्मानित किया ।

'आदाबर्ज़, ख़ुश रहिए !' अब्दुल्ला की ओर देखकर बीरबल ने मुस्कराते हुए कहा ।

यकायक उसका ध्यान एक कोने में चुपचाप मुँह फेरकर बैठे हुए यूसुफ़ख़ाँ की ओर गया । कुछ जानते हुए भी बीरबल ने विनोद वृत्ति को कम न होने दिया । उसके विनोदी स्वभाव को देखकर, और बादशाह का अभिन्न मित्र समझकर ही सब लोग चुटकुलों से उसे ख़ुश रखने का प्रयत्न करते रहते थे । बीरबल ने यूसुफ़ को देखकर पूछा—'क्यों ख़ानसाहब, आज तो किसी गहरे विचार में डूबे जान पड़ते हैं, क्या बात है ?'

'राजाजी, सरदार साहब का गधा कहीं गुम हो गया है !' अब्दुल्ला ने यूसुफ़ की ओर चुटकुला छोड़ा ।

'क्या कह रहे हैं आप ! गधा तो यहीं मौजूद है ।' बीरबल ने ऊपर से आश्चर्य दिखाकर कहा ।

'यहीं है ? सच कह रहे हैं राजाजी ? तो जरा हमें भी दिखलाते

जाइये न !' अब्दुल्ला ने गम्भीरता पूर्वक इस ढंग से पूछा मानो उसके बिना वह अधीर हुआ जा रहा हो !

'जाइये उस आइने में देखिए, अभी दिखाई देगा !' बीरबल ने आइने की ओर संकेत करके कहा। अब्दुल्ला दौड़ा दौड़ा आइने के पास जाकर उसमें देखने लगा; कुछ क्षण देखते रहने के बाद बोला—'किधर है वह, राजाजी....!' बोलते बोलते वह रुक गया; आइने में तो वह अकेला ही दिखाई दे रहा था। आसपास के सभी सरदार ठहाका मारकर हँस पड़े। उन्हें देखकर अप्रतिभ होकर अब्दुल्ला ने भी दाँत निपोर दिये।

यूसुफ़खाँ के रुख़ को बीरबल भली भाँति पहचान गया था किंतु आज उसे यूसुफ़ के मुँह से कुछ कहलाने की तबीयत हो रही थी; यूसुफ़ के समीप जाकर बोला—'आज आप से एक अर्ज़ करना है !'

'मुझे इस वक्त बातचीत करने की फ़ुरसत नहीं है।'—यूसुफ़ उठकर जाने को उद्यत हुआ।

'कोई बात नहीं, ख़ाँसाहब; बातचीत तो मैं करूँगा, आपको सुनना भर है।'

यूसुफ़ भीतर ही भीतर उबलकर भी बोलने के लिए शब्द न पा सका; यकायक रुक कर वह फिर जाने लगा। नासिरख़ाँ से अब न रहा गया; वह भी मुल्ला दोप्याजा का शागिर्द था; उसे भी मज़ाक करके मज़ाक सुनने की आदत थी। उसने अपने पैरों की नई मख़मली जूतियाँ निकालीं, और हथेली पर रखकर, बीरबल के मुँह के पास ले जाकर अति विनयपूर्वक खड़ा हो गया।

'क्या है नासिर मियाँ ?'

'राजाजी, अभी अभी मैं आपकी हवेली पर आने ही वाला था। ख़ाँसाहब ने ख़ास आपके लिए ये जूतियाँ देहली से मँगवाई हैं !'

बीरबल बात का मतलब समझ गया, झट मुस्कराकर जवाब दिया—'ख़ाँसाहब ने मुझे एक जोड़ी जूतियाँ बख़्शी हैं, भगवान उन्हें हज़ारों जूतियाँ बख़्शें !'

यूसुफ़ के साथ ही सब कोई चौंक पड़े और बात का मर्म समझने के बाद यूसुफ़ को छोड़कर सब सरदार खिलखिलकर हँस पड़े। तब बीरबल ने बहुत शान्तिपूर्वक नासिर की हथेली पर से जूतियां उठाकर उसके नंगे पैरों के पास रख दीं। अपनी ऐसी दुर्गति होते देखकर यूसुफ़ ने किटकिटाकर कहा—'चलता क्यों नहीं नासीर, वहाँ खड़ा खड़ा क्या चाट रहा है ?'

'जूतियां ही तो, खाँसाहब !' बीरबल ने तुरन्त उत्तर दे दिया। सब फिर हँस पड़े। बीरबल अधिक वहाँ न ठहरकर मक़तबख़ाने की ओर रवाना हो गया।

'देख लिया सरकार !' यूसुफ के समीप दौड़े आकर अब्दुल्ला बच्चे की सी चपलता और उलाहने से कहा—'इस तरह हम सबों को मूरख बनाकर चले जाना इस राजा के लिए खेल हो गया है; जाते जाते हम सबों को जूते मार गया है !'

'अब ब्याज समेत लौटाने की कोई तरकीब निकालनी ही होगी।' रतनसिंह ने कहा।

'मैं कहता हूँ—बादशाह सलामत उस हिन्दू की सोहबत में रहकर पूरे हिन्दू ही हो जायेंगे ! अबकी अब्दुल्ला ने तनिक धीमे स्वर में कहा।

'वे हिन्दू हो गए हैं—यूसुफ ने किठकिटा कर कहा—'मैं सब कुछ जानता हूँ।'

'ग़ज़ब की ख़ौफ़नाक़ हक़ीक़त है !' एक नए तुर्की ने भौंहें चढ़ाकर कहा !

'अब हमें तैयार हो जाना चाहिए; हम शेरे-मुग़लियात को हरगिज़ हिन्दू नहीं होने देंगे।'

यकायक पीछे की ओर से किसी के हँसने की मन्द-ध्वनि सुनाई दी। सबों ने चौंककर पीछे देखा—वहां स्वर्गीय-सी मुस्कान लेकर, श्वेत केशों से सुशोभित, अकबर के प्रिय मौलवी साईंबाबा खड़े थे।

'साईं बाबा !' अब्दुल्ला ने श्रद्धापूर्ण स्वर में साईं बाबा की आदाब बजाते हुए कहा ।

साईं बाबा मुस्कराते हुए यूसुफ़ख़ां के पास आये; उनके दाहिने हाथ की तसबीह* लगातार घूम रही थी और बायें हाथ से अपनी लम्बी सफेद दाढ़ी सहलाते हुए उन्होंने स्नेहभाव से यूसुफख़ां की ओर देखा । सब सरदारों ने आदरपूर्वक उनके आगे मस्तक झुका दिया । तब साईं बाबा ने यूसुफ़ की पीठ सहलाते हुए कहा—'जवानो, तुम्हें याद होगा कि एक साल पहले रातोंरात बैठकर उन्होंने नाज़रीनों की बाइबल का तर्जुमा सुना था, उसके छः महीने के बाद उन्होंने यहूदियों की मज़हबी किताब को बड़े चाव से सुनकर उसे समझने की कोशिश की और कुछ ही दिनों पहले पारसी मोबेद की 'ख़ुदाई हिक़मत' सुनते सुनते उन्हें खाने पीने की भी सुध न रही—लेकिन फिर भी बादशाह न ईसाई हुए, न यहूदी, न पारसी...तुम्हीं सोचो फिर महाभारत सुनने भर से क्या वे हिन्दू हो जाएँगे ? बच्चो, हमारे आलीजाह ख़ुदा का नूर है—खुदावंद है । उन्हें हम में से कोई नहीं समझ सकेगा, तुम इस ग़फ़लत में न रहो; उनके रास्ते को ग़लत समझने की कोशिश न करो—जाओ !' साईं बाबा तसबीह को आँखों से लगाकर धीरे धीरे दूसरी ओर चले गये । जब तक वे दिखाई दिए, कोई एक शब्द भी न बोला । किंतु उनके होते ही नासीर सशंकित स्वर में बड़बड़ा उठा—'जहाँपनाह को कोई नहीं समझ सकता '

'मैं उन्हें समझता हूँ । यह राजा बीरबल...अत्यन्त क्षुब्ध होकर यूसुफ़ ने दाँत पीसकर कहा—'क़सम खुदा की, अगर मैं इस काफ़िर को जहाँपनाह से अलग न करूँ, तो या ये न रहेगा, या मैं न रहूँगा !' अपने ही उद्गारों की तीव्रता से व्यथित होकर यूसुफ़ जल्दी जल्दी क़दम बढ़ाता हुआ वहाँ से चला गया । सभी सरदार यूसुफ़ख़ाँ की व्यथा का आंशिक अनुभव कर रहे थे । यूसुफ़ के चले जाने के बाद कूटनीतिज्ञ अब्दुल्ला धीरे से बुदबुदाया—'बोलिये सो करिये !

*सुमरनी

शहनशाह जलालुद्दीन अक़बर स्थिर खड़ा था; उसकी दृष्टि आकाश की ओर थी, और पीठ द्वार की ओर।

जहाँ, सहस्त्रों वर्ष की संस्कृतियों, विचारधाराओं और अनुभवों से परिपूरित संसार के विभिन्न दर्शन, साहित्य और कला के श्रेठ ग्रन्थों का दिनरात फ़ारसी भाषा में अनुवाद होता रहता था, जहाँ के ईरानी और काश्मीरी क़ालीनों पर बैठ कर फ़ैज़ी, फ़तहउल्ला, अबुल फ़ज़ल और जगन्नाथ पंडित के-से विद्वान संस्कृत और फ़ारसी साहित्य-निधि का अन्वेषण करके एक से एक अनोखे मोती बादशाह के सामने पेश करते थे, जहाँ कि भित्तियों के प्रत्येक अंगुल पर, महान् चित्रकार ख़्वाजा अहमद और उसका शिष्य दुष्यन्त अपनी सजीव और लाक्षणिक चित्रकला से फ़ारसी ग्रन्थों के प्रत्येक पृष्ठ को वाणी दे रहे थे, जहाँ के मुख्य कक्ष में बैठकर महापंडित देवी मिश्र और बिदौनी, महाकाव्यों की रचना में, और ज़रीन-कलम* मुहम्मद हुसैन जैसे कलाकार उनके रूप-लालित्य के लिए जुटे रहते थे और जहाँ बीरबल, कवि गंग, हरिराम और तानसेन जैसे विभिन्न विद्या में पारंगत कलाकार बृजभाषा के माधुर्य को संगीत, कविता और कमनीयता की त्रिवेणी में अहर्निश प्रवाहित करते रहते थे—स्वयं उसमें बहकर और दूसरों को बहाकर अक़बर बादशाह द्वारा स्थापित फतहपुर सीकरी के शाहीमहल के समीप और भारतप्रसिद्ध इबादतख़ाने से कुछ ही दूर स्थित उस मक़तबख़ाने के सभामंडप में अक़बर खड़ा था—द्वार की ओर पीठ किये!

अक़बर के पीछे की ओर महान् राजनीतिज्ञ और विद्वान अबुल-फज़ल, शायरों का शायर फ़ैजी, राजा बीरबल, विनोद मूर्ति मुल्ला दोप्याज़ा, हकीम हमाम, महाकवि गंग, पंडित जगन्नाथ और देवी मिश्र बाअदब खड़े थे। और हाँ, उन्हीं के बीचोंबीच धर्मान्ध, किंतु अपने

*अति सुन्दर अक्षर लिखने के लिए मुहम्मदहुसेन को यह उपाधि मिली थी।

विचारों के प्रति प्रामाणिक इतिहासकार बिदौनी भी सिर झुकाकर खड़ा था।

उस क्षण, मक़तबख़ाने के पश्चिमाभिमुख मेहराब के बाहरवाले नारियल के पेड़ के चित्र-विचित्र पत्तों के पीछे सूर्य भगवान, क्षितिज की ओर दौड़े चले जा रहे थे। बादशाह भी, अपने दोनों हाथ पीछे किये, वातायन (महराब) के पास खड़ा हुआ दूर बहुत दूर देख रहा था क्षितिज को! उसके गम्भीर मुख पर भाव की लहरों के साथ साथ नारियल के पत्तों की चंचल छाया भी अठखेलियाँ कर रही थी। उसकी स्थिर दृष्टि और गंभीर मुखाकृति पर से, उसके हृदय में सुख का नर्तन हो रहा था, या दुःख का तांडव, इस बात की कल्पना करना अति कठिन था!

वहाँ का समस्त वातावरण शांत होते हुए भी, मानों एक अनबूझ समस्या बन कर, बादशाह के पीछे खड़े सरदारों के मन-मस्तिष्क में, विचित्र शंकाओं और तर्कों का स्फुरण कर रहा था। आज अक़बर ने तीसरी बार महाभारत सुना था, और पहली बार महाभारत सुनने के बाद वह जिस तरह गहन विचारों में मग्न हुआ था, उसी तरह वह आज भी अतिगंभीर हो गया था। उसकी स्थिर दृष्टि क्षितिज को भी भेदकर जाने किस समस्या का समाधान ढूँढ़ रही थी!

सहसा विचार-शृंखला टूटी और बादशाह ने विद्वदसमूह की ओर देखा। विद्वानों ने उत्सुक-दृष्टि से अक़बर की ओर देखा; अक़बर ने पुनः मुँह फेर कर अपनी दृष्टि क्षितिज की ओर लगाई किंतु इस बार फ़ैज़ी ने, बादशाह के विचारों की शृंखला टूटी जान, वहाँ की शांति भंग करके कहा—'आलीजाह, महाभारत का फारसी अनुवाद संपूर्ण हो गया है। आप इसे स्वीकार करें।'

बादशाह ने उसी ओर दृष्टि रखकर कहा—'महाभारत फारसी भाषा में!.. संपूर्ण हो गया?'

'नहीं हुज़ूर, अभी अपूर्ण है!' राजा बीरबल बीच ही में बोल उठा। सबों ने चौंक कर उसकी ओर देखा। बीरबल ने शांतिपूर्वक अपनी

बात पूरी की—'हुजूर, अभी तक फारसी भाषा में उसका नाम नहीं रखा गया, इसीलिए अपूर्ण रह गया है !'

कूटनीतिज्ञ अबुलफ़जल ने भी अवसर का पूरा सदुपयोग करते हुए अदब के साथ कहा—'हाँ हुजूर, अभी तक उसका फारसी नाम नहीं रखा गया, अगर हुजूर कुछ फरमाएं तो—' बादशाह यकायक नजर घुमाकर अपने दरबार के रत्नों को देखने लगा; उन सबके आगे शायर फ़ैजी दोनों हाथों में महाभारत लिए खड़ा था। अकबर फ़ैजी के समीप आकर बोला—

'शायर, इस किताब का नाम मैं "रजबनामा" रखता हूँ, इसे संसार की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों के साथ, "शाहनामा" के पास रखा जाय। इसकी दूसरी नक़लें उतारने की शुरुआत भी कर दी जाय। अकबर के हरएक शाहज़ादे के बालिग़ होते ही "रजबनामा" भेंट किया जाए। हिन्दुस्तान की राजगद्दी पर बैठने वाले किसी भी शहंशाह को "रजबनामा" पढ़े बग़ैर राजगद्दी पर बैठने का कोई अधिकार नहीं...!

'उसने अपने गम्भीर उद्‌गार व्यक्त करते ही महाभारत का प्रथम पृष्ठ निकाला, और पुनः जाने क्या सोचकर क्षितिज की ओर देखने लगा। जरीनकलम ने आशय समझ कर उस पृष्ठ का नाम लिखना प्रारम्भ किया और चित्रकार ख़्वाजा-साहब ने तूलिका लेकर उसमें रंग भरना शुरू किया।

तब अपने पीछे ही उत्सुक-से खड़े शेख़जी से अकबर ने अर्थभरे ढंग से पूछा—'शेख़जी, 'रजबनामा' का मतलब तो राजधर्म होता है किंतु राजा का मतलब...?'

'जहाँपनाह, जो रिआया को खुश रख सके वही राजा है, जैसे कि आप हुज़ूर...' तनिक संकुचित होते हुए फ़ैज़ी ने उत्तर दिया।

'आप क्या कहते हैं अबुलफ़ज़ल साहब ?' अबुलफ़ज़ल की ओर संकेत करके बादशाह ने पूछा।

'हुज़ूर, जो सबों को एक नजर से देखे, जो एक ज़बान से सबों का इन्साफ़ करे, जो एक दिल से सबों का प्यार करे, वही तो हुजूर !' अबुलफ़ज़ल ने बताया।

'...और राजाजी आप...?' अकबर ने बिना उस ओर मुँह घुमाये ही बीरबल की ओर दृष्टिपात किया।

बीरबल इस प्रश्न के लिए तैयार ही था; बहुत देरी से वह अकबर के विचारमंथन की लहरों को मापने का प्रयत्न कर रहा था, और बादशाह की हार्दिक उथल-पुथल का सही अनुमान बीरबल के सिवा सारी सभा में से कोई भी इतने सही तौर पर नहीं कर सकता था। अकबर के प्रश्न के साथ ही दरबारियों की आँखें बीरबल को समस्यापूर्ण आंखों की ओर जा लगीं और आज बीरबल ने अपने राजसी जीवन में पहली बार गंभीर—सचमुच अति गंभीर—स्वर में कहना शुरू किया—

'आलीजाह, वैसे तो मुझे भी 'राजा' कह कर पुकारा जाता है, किन्तु हुजूर, जो सुख पाने पर बहक जाय और दुःख पाने पर काँप उठे, वह राजा कैसा ? राजा प्रजा की सुरक्षा और सुख के लिए ईश्वर का भेजा हुआ देवी दूत होता है। बादशाह का मतलब है, बादशाहत का रखवाला !.... कृपानिधान, इसी आर्यावर्त के अनेकों चक्रवर्ती सम्राटों ने केवल वचन के लिए अपनी पट्टरानी को बेच दिया, और प्रजा के नाम पर अपनी महान पत्नी का त्याग कर दिया है। इसी भारतवर्ष के राजाओं ने अपने राजधर्म की रक्षा के लिए अपने बत्तीस लक्षणोंवाले युवक पुत्रों का बलिदान किया और कर्तव्य के नाम पर अपने हाथों से अपने पुत्र की हत्या की है !.... और अब आपकी योग्य हिन्दुस्तनी प्रजा उन महान् प्रातःस्मरणीय विभूतियों के साथ आपका भी गुणगान करने लगी है—उसी बादशाह के गुणगान—जिसका कर्तव्य है, एक नजर से सबों को देखना, एक मति से सबों का न्याय करना और एक हृदय से सबों को प्यार करना ! धृष्टता के

लिए क्षमा हो तो कहूँ कि हुजूर, आज फ़ारसी महाभारत समाप्त नहीं हुआ, आज तो "रजबनामा" अर्थात् राजधर्म का प्रारम्भ हुआ है !... और इस राजधर्म के प्रवर्तक बादशाह के चरणों में मेरे सौ सौ प्राण निछावर हैं, यदि ईश्वर मुझे सौ प्राण दे ! महाराज, इस दुनिया के यदि कोई सबसे दुखी या सब से सुखी कोई है, तो बादशाह ही। उसके पास संसार के सम्पूर्ण साधन होते हुए भी, कर्तव्य का समय आने पर उसे अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु का भी परित्याग कर देना पड़ता है। जो बादशाह हृदय में अनगिनत अंगारों की जलन का अनुभव करते हुए भी हँसते हुए अपने बड़े से बड़े हित का बलिदान करसके वही सच्चा राजा है। और इसी कर्तव्य के अन्तर्गत राजधर्म निहित है। महाभारत इसी 'राजधर्म' की सच्ची शिक्षा देता है। आप अपने राज्य-काल में उसी राजधर्म का पालन कर रहे हैं। कृपानिधान, आज की परिभाषा में राजा का सम्पूर्ण अर्थ अकबर बादशाह है !'

बादशाह एकटक बीरबल को देखता रहा—उसका मानसिक और शारीरिक केन्द्रीकरण सम्पूर्ण रूप से बीरबल की ओर था। नारियल के पेड़ों के झुण्ड के पीछे छिपे हुए सूर्य-भगवान अकबर के मस्तक के ठीक पीछे मानों एक नये प्रभामण्डल की रचना कर रहे थे। सहसा, बीरबल के साथ ही साथ अन्य सरदार भी मानसिक दृष्टि से अकबर के सामने नतमस्तक हो गये—मानो सबों के हृदय में बीरबल के उन्हीं वचनों की प्रतिध्वनि एक साथ गूँज उठी !

तब अकबर ने मुस्कराते हुए सरदारों की ओर मुँह फेरकर कहा—'सरदारो, आज 'रजबनामा' समाप्त हुआ है लेकिन देखता हूँ कि राजाजी भी आज अपनापन समाप्त कर बैठे हैं !'

और प्रत्युत्तर में सब सरदारों के मुँह से अनजाने में ही निकल पड़ा—'अकबर बादशाह ही राजा हैं !'

सब के मुँह से ये वाक्य क्यों निकल पड़ा—? इसे "चमत्कार" ही कहा जा सकता है !...किंतु अकबर का दरबार ऐसे "चमत्कारों" को देखने का अभ्यस्त था।

—और कुछ ही दिनों में अकबर के राज्य में उत्क्रान्ति का जन्म हुआ। कुछ ही सप्ताह की अवधि में अनेकों "फ़रमान" निकले। प्रजा को ज्ञात था कि इन 'फ़रमानों" के पीछे स्वयं अकबर बादशाह है और अकबर बादशाह की पृष्ठभूमि में स्वयं राजा बीरबल हैं।

पहला "फ़रमान" निकला—

"यदि ईश्वर ये चाहता कि संसार में केवल एक ही धर्म का अस्तित्व रहे, तो वह दूसरे धर्मों को नष्टविनष्ट कर देता। किंतु उसके कर्तृत्व से प्रतीत होता है सभी धर्म उसके ही धर्म हैं। इस राज्य की प्रजा को इसी आदेश का पालन करना चाहिए।"

दूसरा "फ़रमान" था—

"यहाँ की सभी जातियाँ पारसियों के "नवरोज़" त्यौहार का उत्सव मनायें!"

तीसरा "फ़रमान' था—

"हमारे राज्य में किसी भी कारण गोवध करना निषिद्ध है!"

चौथा "फ़रमान" था—

"पवित्र दिवसों में मांस भक्षण न किया जाय।"

पाँचवाँ "फ़रमान" था—

"हज के यात्रियों को शाही तौर पर मदद दी जाएगी।"

छठा "फ़रमान" था—

"सूर्य और अग्नि पवित्र हैं। इन दोनों को इष्ट माननेवाले लोग बिना किसी संकोच एवं भय के, इनकी आराधना कर सकते हैं!"

बस अचानक अकबर के राज्य में निरन्तर रूप से फ़रमानों की भरमार हो उठी और इसकी प्रतिक्रिया अकबर के मुसलमानों पर एक उल्कापात की तरह हुई।

अब्दुल्लाख़ाँ उज़बेग ने खुलेआम यह प्रचार करना शुरू कर दिया कि "अकबर बादशाह ने इस्लाम छोड़ दिया है !"

शेख़ मुबारक का मत था कि "बादशाह पाक इस्लामी है !"

भिन्न धर्म और विचार के लोगों ने, अकबर के इन अचानक निकाले जाने वाले फ़रमानों से प्रभावित होकर उसे अपने अपने धर्म का पूजक समझना शुरू कर दिया। कहा नहीं जा सकता कि यह अकबर की राजनीतिक सफलता थी या धार्मिक सफलता थी किंतु यह निश्चित कहा जा सकता है कि यह अकबर बादशाह की एक अभूत पूर्व सफलता थी !

हिंदुओं ने एक स्वर से कहना शुरू किया—"अकबर हिंदू धर्मावलम्बी है !"

तुर्क सरदारों ने कहा—"अकबर बादशाह हमारे हैं !"

पारसियों ने कहा—"बादशाह हमारे धर्म के पूजक हैं !"

और ईसाई पादरियों ने घोषणा की—"अकबर बादशाह धीरे धीरे ईसाई होता जा रहा है !"

इस तरह छोटी सी अवधि में अकबर भारत की प्रत्येक जाति और धर्म का प्रिय राजा बन गया या यों कह सकते हैं कि बादशाह ने प्रत्येक धर्म और जाति को अपना बना लिया।

बीरबल के उद्गारों का भारत के प्रत्येक प्रजाजन ने अनुमोदन किया कि "अकबर बादशाह ही सच्चे राजा हैं !"

केवल एक ही व्यक्ति क्षुब्ध था; उसका नाम था यूसुफ़ख़ाँ।

"सरकार, जानते हैं आप कौन हैं ?"

नासिरख़ाँ ने अपने स्वाभाविक ख़ुशामदी ढंग से विषाक्त हँसी के साथ शाहज़ादा सलीम से पूछा। प्रश्न में उत्तर मानो निहित था, उसके हाथ में एक प्याला था और उसमें मदिरा थी। पन्द्रह ही दिन हुए होंगे जब यूसूफ़ख़ाँ की आज्ञा से नासिर ख़ाँ ने शाहज़ादा सलीम का, इस छलकते हुए पैमाने से मौन-परिचय कराया था—उस समय, जब सलीम शिकार की थकान में चूर होकर लौट रहा था !...पहले पहल प्याला थामते हुए सलीम को पिता के डर से कुछ झिझक हुई तो यूसुफ़ख़ाँ ने कर्त्तव्य की दुहाई देकर शाहज़ादा को प्रोत्साहित किया—'हुज़ूर आप हिंदुस्तान के शाहंशाह के शाहज़ादा हैं; ख़ुदा जानता है कि आप अपने बाबाजान से भी एक क़दम आगे बढ़कर दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने तक इस्लाम धर्म का झंडा फहराएँगे ! आपका इस शीशे के प्याले से ख़ौफ़ करना आपकी शान के ख़िलाफ़ है; बंदा फिर से एक बार अर्ज़ करता है कि शाहज़ादा की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ सिवा ख़ुदा के कोई भी कुछ नहीं कर सकता !'

'या रब ! तेरा लाख लाख शुक्र है कि तूने यूसुफ़ ख़ाँ जैसे नमक-हलाल बंदे शाहज़ादा के आस-पास भेज दिये जो दिन-रात तलवार हाथ में लिए उनको बचाये रखते हैं !' नासिर ख़ाँ ने दुहाई दी—'सरकार, जानते हैं आप कौन हैं ? आप जो एक बार सोच लें वह होना ही चाहिए ! आज ही इस बात पर अमल कीजिए इस प्याले को अपना कर ! इससे आपको आराम मिलेगा। बस, इसके बाद आप जो कुछ दिल में ठान लेंगे, बादशाह को भी मानना पड़ेगा। बस एक बार जी कड़ा कर लीजिए हुज़ूर, सिर्फ़ एक बार ! फिर बार बार आप इस नाचीज़ ग़ुलाम को याद फ़रमाएँगे।'

यूसुफ़ और नासिर के ख़ुशामदी ज़हर में बुझे हुए शब्दों ने असर दिखाया और नादान सलीम ने काँपते हुए हाथों से पारदर्शक शीशे में छलकते हुए लाल लाल विष को अपने जीवन में उतार लिया।

सिर्फ़ एक ही प्याला सलीम को आकाश में उड़ा ले गया; यद्यपि वह अपनी सुध-बुध खो नहीं बैठा था। एक हलका नशा उस पर छा गया और वह सधे हुए क़दमों से हरम की तरफ़ चला गया। यूसुफ़ और उसके साथी दूसरे सरदारों हिंदुस्तान के भावी शाहंशाह को अपनी उलटी बुद्धि का पाठ पढ़ा रहे थे और इस्लाम के नाम पर सलीम के दिमाग़ में बहुत सी उल्टी-सीधी बातें ठूँस रहे थे। वह भी इस चालाकी से कि बादशाह के आदर में ज़रा भी कमी न आये और दूसरे किसी को शक भी न हो! यूसुफ़ का प्रोत्साहन पाकर धीरे धीरे सलीम स्वच्छंद होता जा रहा था।

जैसे ही सलीम गया, यूसुफ़ उसके पीछे पीछे हरम की तरफ़ जा ही रहा था कि एक नौकर ने "आदाब हुज़ूर" कहकर उसे रोक लिया; उसके साथ पश्चिमी सूबा का गोआ से भेजा हुआ एक पादरी था।

"हुज़ूर, यह पादरी गोआ से आया है इसके पास अरगुन नाम का बाजा है जिसे लेकर बादशाह सलामत की ख़िदमत में पेश होना चाहता है!"

"ठीक है; मैं ही इन्हें ले जाता हूँ, इस वक्त हुज़ूर कहाँ होंगे?" यूसुफ़ ने धीमे स्वर में पूछा।

"इबादतख़ाने में हुज़ूर!" कहकर नौकर चला गया।

अकबर का हुक्म था कि पादरी के आते ही वह उसके पास लेजाया जाय इसलिए इच्छा न होते हुए भी वह इबादतख़ाने की तरफ़ रवाना हुआ। महल के बाहर आते ही वह चकित हो गया। अरगुन ("ऑर्गन" नामक अंग्रेज़ी बाजा) एक ओर रखा हुआ था और फ़िरंगियों की एक छोटी-सी टोली वहाँ खड़ी थी। यूसुफ़ ने खीझ कर उन लोगों को अपने पीछे पीछे आने का इशारा किया।

इबादतख़ाना वादविवाद के उच्च स्वरों से गूँज रहा था। कुछ वर्षों से अकबर ने; सभी धर्मों का कुछ कुछ मनन करने के बाद सत्य और ईश्वर को जानने के लिए प्रत्येक धर्म के विद्वान, गुरु और आचार्य को इबादतख़ाने में बुलाकर धर्मचर्चा करना शुरू किया था। इस सभा में प्रत्येक व्यक्ति को अपने अपने विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता थी। बादशाह ने उस अवसर पर गोआ से पादरियों, गुजरात से पारसयों के गुरु दस्तूर मेहर जी राना और जैन गुरु विजयसूरि का विशेष रूप से आतिथ्य किया था। यह इबादतख़ाना बादशाह ने अपनी देख रेख में तैयार कराया था। यहाँ कई अवसरों पर बादशाह ने उलेमाओं और धर्म गुरुओं के साथ वाद विवाद में सारी रात गुज़ार दी थी।

आज भी ऐसा ही एक विशेष अवसर था जब की बादशाह ने दूर दूर से सभी धर्मावलंबियों को एकत्रित किया था; वह स्वयं आज उत्साहित था।

बादशाह ने स्वयं चर्चा का प्रारंभ किया—"राजा जी, ख़ुदा क्या है?"

"ईश्वर, हुज़ूर!" बीरबल ने उसी क्षण उत्तर दिया।

"शेख़ जी ईश्वर क्या है?" बादशाह ने फ़ैजी से पूछा।

"ख़ुदा, आलीजाह!" यह शेख का उत्तर था।

"वाह, वाह! सत्यम्- शिवम्, सुन्दरम्!" पंडित जगन्नाथ अपने आप ही डोल उठे।

बादशाह ने मुस्करा कर कनखियों से पंडित की ओर देखा फिर गोआ के पादरी इकवेरा की ओर देख कर पूछा—"पादरी जी, आपने अपने गॉड की बात नहीं बताई?"

"जो सब से बड़ा है, सबका है, सब के लिए है और नाज़रिन ने जन साधारण के लिए जिसका स्पष्ट वर्णन किया है; वह!"

"आचार्य, आप क्यों कुछ नहीं कहने ?" पादरी की बात सुनने के बाद अकबर ने जैन मुनि की ओर संकेत किया।

"जो ज्ञेय है, सर्वोपरि है और जो सर्व शक्तिमान है !"

"किसने देखा है उस सर्व शक्तिमान परमात्मा और सबके रसूल ख़ुदा को !" एक कोने में छिपकर बैठे हुए चार्वाक (नास्तिक) ने ललकरा उसके चेहरे पर और आँखों में निरंकुशता और उच्छृंखलता खेल रही थी। उसने बिना रुके उसी वेग में कहना शुरू किया—"हुजूर, मैं कहता हूँ, ईश्वर है ही नहीं, यहाँ जितने धर्म धुरंधर बैठे हैं उनमें से किसी ने भी उसे देखा है ? आपने देखा है ?"

"ईश्वर को देखा नहीं जा सकता किंतु उसके अस्तित्व के लक्षण अवश्य दिखाई देते हैं !" बादशाह ने मृदु मुस्कान के साथ कहना शुरू किया—"जब हम करसगाह की तरफ शिकार के लिए गये तो सैकड़ों प्राणियों का शिकार करने के बाद मैं काफ़ी थक चुका था; दिल में बरसों से जो उलझन चली आ रही थी, वह और बढ़ गई। ऐसा मालूम हुआ जैसे कि मैं किसी अनंत निराशा में डूबता चला जा रहा हूँ। अपनी इस अज्ञात निराशा से जूझने के लिए मैं उसी वक़्त अकेला बहुत दूर घने जंगल में चला गया। मेरी बेचैनी असह्य होती जा रही थी इसलिए मैं एक पेड़ के नीचे बैठकर, ख़ुदा की बन्दगी में खो जाने के लिए अपने आसपास की दुनिया को भूलने का प्रयत्न करने लगा। उसी समय मेरे हृदय में प्रकाश का आभास हुआ; मेरा मन प्रफुल्ल होकर मानो नाचने लगा और धीरे धीरे किसी अकथनीय आनन्द का अनुभव करता हुआ उस अनदेखे ईश्वर के दिखाये प्रकाश के मार्ग पर खींचता चला गया। इस दुनिया के पुरानेपन को भूल कर हर एक चीज़ को एक नई नज़र से देखने लगा। दुनिया मुझे एक अजीब चीज़ मालूम हुई। मेरे हृदय में खेलता हुआ आनन्द मेरे अस्तित्व को एक नया रूप देने लगा; मुझे ऐसा लगा कि—

"वही ख़ुदा है ?" चार्वाक ने अकबर की बात काटकर प्रश्न किया।

"नहीं !"

"तो आपने ख़ुदा को नहीं देखा ?"

"ख़ुदा को देखा नहीं, उसका अनुभव किया !"

"बादशाह, जो कुछ हम देखते हैं, वही सत्य है; जो वस्तु पंचेद्रियों की शक्ति के बाहर है, वह असत्य है। आप जिसे ईश्वर कहते हैं वह मनुष्य की साधारण तौर पर पहचानने की शक्तियों-इन्द्रियों से देखा या जाना नहीं जा सकता इसलिए वह असत्य है। ईश्वर नहीं है !"

"ख़ुदा है।"बादशाह ने निश्चित और शांत स्वर में प्रतिकार किया–"सबों का एक ही ख़ुदा है; अलग लोगों ने उसके अलग अलग नाम रख दिये हैं। चार्वाक साधु ! मंजिल एक है, रास्ते अलग अलग हैं।"

"वाह वाह शाहंशाह, क्या बात कही है, राग एक हैं, गाने वाले अलग अलग हैं !" तानसेन ने मस्त होकर कहा—"सिर्फ़ यक़ीन चाहिए !"

"अच्छा !यक़ीन में से ख़ुदा होता है ?" तानसेन की तरफ़ तिरछी नज़र से देखकर चार्वाक ने पूछा।

"यक़ीन बड़ा है या ख़ुदा ?" अकबर ने मानो वहाँ बैठे हुए धर्म धुरंधरों को चुनौती दी—"आपका क्या जवाब है मौलवी साहब ?"

मुल्ला दोप्याज़ा, जिसके माँ-बाप ने बचपन में सारा क़ुरान कण्ठस्थ करा दिया था, बादशाह का प्रश्न सुनकर कुछ हिचकिचाया। यद्यपि वह आशुकवि और हाज़िरजवाबी था, धार्मिक वादविवाद के समय गंभीर हो जाया करता था।

मुल्ला दोप्याज़ा का उत्तर था—"हुज़ूर, इसमें कहने लायक क्या है—ख़ुदा—!"

राजाजी, आप किसे बड़ा मानते हैं–"यकीन को, या ख़ुदा को ?"

"यक़ीन को" राजाजी ने मानो बहुत धैर्य पूर्वक उत्तर दिया; वहाँ बैठे हुए सभी धर्मधुरन्धर चौंक-से गये। पर चार्वाक तो मारे ख़ुशी के

उछलकर बोला—"वाह राजाजी, क्या बात कही है ! मेरा यक़ीन है कि ख़ुदा नहीं है !"

"लेकिन मैंने यह तो नहीं कहा कि ईश्वर नहीं है ।" राजाजी ने धीरे से उत्तर दिया ।

"राजाजी, हम सब से पहले से ही मान बैठे हैं कि आप बड़े अक्लमन्द हैं, लेकिन माफ़ कीजिएगा, आप यह समझने की तकलीफ़ उठाएंगे कि ख़ुदा से यक़ीन बड़ा कैसे है ?" अपना गुस्सा दबाते हुए मुल्ला दोप्याज़ा ने पूछा ।

"मुल्लाजी, गुस्ताख़ी माफ़ हो, बताइये तो आपने अपनी बग़ल में क्या छुपा रखा है ?"

"मैंने छुपाया कुछ भी नहीं, हुज़ूर के लिए भेंट लाया हूँ; हुज़ूर ये बड़ी सराय के पीर की जूती हैं, आपके चूमने के लिए ले आया हूँ ।" तनिक उत्तेजित होकर मुल्ला ने कहा ।

"मुल्लाजी जिस जूती को आपने सुबह से अभी तक चूमा है और जिसे यहाँ के सैकड़ों सरदारों ने चूम-चूम कर हृदय से लगाया है, वह शाहज़ादा सलीम की है जिसे मैंने खुद कल दर्गाह में रखवाया था, इसके जोड़ वाली दूसरी जूती मेरे पास मौजूद है—अब बताइये यक़ीन बड़ा है या ख़ुदा ?"

बीरबल ने दूसरी जूती बादशाह के सामने लाकर रख दी ।

यूसुफ़ जो गोआ के पादरी के पास खड़ा खड़ा सब कुछ देख रहा था, बीरबल की ओर देख कर सुलग उठा । उसने चार बार उस जूती को चूमा था और उसके बराबर में खड़े हुए नासिरख़ाँ ने दस बार । दोनों का क्रोध के मारे बुरा हाल था । किंतु इन दोनों से भी ज्यादा क्रोधित उस समय कल्याणमल हो रहा था जिसके पीर ही इष्ट-देव थे । उसने पीर की जूती को दुनिया का बड़ा से बड़ा चमत्कार समझा था और उसे सैकड़ों बार चूमकर पीर से प्रार्थना की थी बीरबल

जल्द से जल्द जहन्नुम में चला जाय और उसे ऐसा पुत्र मिले जो बाद-शाह के बराबर वाली गद्दी पर बैठ सके। वहाँ बैठे हुए सब बड़े बड़े सरदारों की बुरी हालत देखकर बादशाह ने मुस्करा कर बीरबल का मानो समर्थन किया—"तो राजाजी, आप यक़ीन को सब से बड़ा मानते हैं ?"

"नहीं हुज़ूर, यक़ीन अथवा विश्वास से भी बड़ा ज्ञान है और ज्ञान से ईश्वर को पहचानना बहुत कठिन है, लेकिन उसके ढूँढ़ने और पाने का सच्चा रास्ता यही है।"

"वाह, वाह राजाजी ! बिल्कुल ठीक कह रहे हैं आप।" बादशाह गद्गद् होकर कहा।

"राजाजी, मैं पूछता हूँ—क्या ज्ञान से ईश्वर को देखा जा सकता है ? नहीं, ख़ुदा नहीं है—नास्तीश्वरः ! विश्वास ही पत्थर को देव और देव को पत्थर बनाता है। बादशाह, ईश्वर नहीं है।"

"खुदा है" बादशाह ने मानो उसे समझाने का प्रयत्न किया— "वह ज्ञान से मिलता है, विश्वास करने से मिलता है, भक्ति से मिलता है, वह इबादत से मिलता है। मुझे दुनिया के सभी धर्म समान मालूम होते हैं। सबों का एक ही ख़ुदा है। न्याय करने वाला राजा यह बात भूल जाता है कि उसके सामने खड़े होने वाले अभियोगी हिंदू, मुसलमान या ईसाई हैं; उसके लिए सब लोग उसकी प्रजा हैं। विद्वानो ! ईश्वर के सामने ये सब धर्म और मज़हब एक समान हैं; उसके सामने सिर झुकाकर खड़े हुए सब धर्म एक हैं। वही है खुदा और ईश्वर, जिसका सबसे प्रसिद्ध नाम 'सत्य' है।"

अबुलफ़ज़ल और बीरबल विमुग्ध होकर बादशाह को देख रहे थे और सारी सभा मौन होकर उसके सर्वसमन्वयी विचारों के प्रत्येक शब्द का अनुमोदन कर रही थी।

बीरबल के इस मज़ाक पर यूसुफ़ खून का घूँट पीकर रह गया; उसने बड़ी कठिनाई से, क्रोध दबा कर गोआ के पादरी से बादशाह का का परिचय कराया।

कुछ क्षणों में अभूतपूर्व 'ऑर्गन' बाजा बादशाह के सामने लाया गया और पादरी लोग उसे बजाते हुए प्रार्थना करने लगे। 'आर्गन' की मीठी ध्वनि बादशाह के उल्लसित और भक्ति गद्गद् हृदय को अपनी ओर खींचने लगी। तानसेन भी मस्त हाथी की तरह झूमने लगा और पादरियों ने भी प्रार्थना के साथ ही साथ सूरदास का एक भक्ति रस में सना हुआ भजन प्रारम्भ किया। प्रभु की प्रार्थना को ईसाई से हिंदू बनते देर न लगी। न कानों में कटुता का अनुभव हुआ और न ताल में रुकावट हुई। नदी के पानी के प्रवाह की तरह प्रार्थना का वेग उत्तरोत्तर बढ़ने लगा।

राग एक ही था; गाने वाले अलग अलग थे। भाषा अलग अलग थी, भाव एक ही था।

बिना समझे भी सब आनन्द का अनुभव कर रहे थे, सिर्फ यूसुफ़ख़ाँ को छोड़कर।

जूती की इस घटना ने उसके धैर्य का बाँध तोड़ दिया था। वह मौका देखते ही प्रार्थना में से उठ खड़ा हुआ।

फ़ज़ल और अकबर ने यूसुफ़ख़ाँ को प्रार्थना में से उठ कर जाते हुए देखा। अकबर की सभा में से आज्ञा के बिना चले जाना मौत के मुँह में चले जाने के समान था किंतु यूसुफ़ की हर बात बादशाह मानता था और उसके इबादतखाने में हर कोई स्वतन्त्र था, बैठने, उठने और बोलने के लिए!

---

(१७)

आग भड़क रही थी! अकबर की सभा के मुल्ला और अुलेमाओं ने अपने ढंग से इस्लाम का मतलब यूसुफ़ को समझाना शुरू कर दिया था। यूसुफ़ जूती की घटना के बाद एक नये धार्मिक उन्माद में उभरता जा रहा था; उसकी आँखें तिरस्कार से जलने लगी थीं, उसके हृदय में से आदर और संकोच मिटता जा रहा था। अब तक छुपी हुई उसके दिल की आग आज मक़तबख़ाने में भड़क उठी।

"शायर, शायरी एक चीज़ है और बादशाह दूसरी। तुमने और तुम्हारे भाइयों ने संस्कृत सीख सीख कर बादशाह का दिमाग़ ख़राब कर डाला है!"

पीर की जूती की घटना ने यूसुफ़ और उसके साथी अब्दुल्ला, नासिरखाँ और बादशाह से असन्तुष्ट तमाम उलेमाओं को एक सुन्दर अवसर प्रदान किया था।

यूसुफ़ की यकायक इस जोरों की ललकार ने फ़ैज़ी और वज़ीरे-आज़म अबुल फ़ज़ल को किंकर्त्तव्य विमूढ़ कर दिया।* उनके साथ साथ अब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना, जो अभी अभी पश्चिम की लड़ाई जीत कर आये थे और सारा मक़तबख़ाना चकित होकर यूसुफ़ को क्रोध की आग में जलते हुए देख रहा था, जो आज राजाजी और उनके हरएक मित्र को भस्म कर देने के लिए उतावली हो रही थी।

"आप भूल कर रहे हैं खाँ साहब, कल आपको राजाजी बुरे मालूम होते थे, आज हम बुरे मालूम हो रहे हैं?" फ़ैज़ी ने क्रोध को हँसी से दबाने का प्रयत्न किया।

"वह बीरबल?" यूसुफ़ ने चीख़कर पूछा।

"राजाजी कहो!" अबुल फ़ज़ल ने धीमे किंतु निश्चित स्वर से यूसुफ़ को आज्ञा दी

किंतु आज यूसुफ़ आपे से बाहर हो रहा था; और ज़ोरों से चिल्लाया—"राजा जी!...मैं तुम सबों को अच्छी तरह जानता हूँ, तुम सब बादशाह सलामत के लिए ज़हर हो और वह राजाजी उस ज़हर की जड़ हैं!"

"ख़ुदा का शुक्र करो—मक़तबख़ाने में ये कैसी बातें कर रहे हो?"

"तो मतलब क्या है वज़ीरे आज़म?" यूसुफ़ ने जैसे चुनौती दी।

---

*वृज भाषा के अनोखे कवि अब्दुलरहीम ख़ानख़ाना भी, पश्चिम की बड़ी लड़ाई जीतकर बादशाह का धन्यवाद पाने के लिए आये थे, और—

"मतलब यह कि यहाँ मैं किताबों का ग़ुलाम हूँ; अगर इस वक़्त मैं बादशाहत के ग़ुलाम के तौर पर होता तो यह सब करने की तुम्हें तकलीफ़ नहीं देता—तुम्हें सीधे रास्ते पर पहुँचा दिया होता।"

"मैं धर्म के रास्ते पर खड़ा हूँ।"

"तुम ग़लत रास्ते पर हो!" फ़ैजी ने कहा।

"तुम लोग ही मज़हब को ग़लत करना चाहते हो इसलिए मैं यह सब कह रहा हूँ। कहता ही नहीं अपना फ़र्ज़ भी अदा कर रहा हूँ!"

"करते रहो अदा!" ख़ान ख़ाना ने मज़ाक में कहा।

"बोलो, अच्छी तरह बोलो! विद्वान जो हो—बोलने में तुम्हें कौन जीत सकता है मुझे तुम में और राजाजी में ज़रा भी फ़र्क मालूम नहीं होता!"

"वाह, कितनी ख़ुशी की बात है!" फ़ैज़ी ने सचमुच ख़ुश होकर कहा।

"ख़ुशी?" यूसुफ़ फिर चिल्लाया—"तुमने आज तक जो भी कुछ सीखा वह ज़हर है और जो कुछ कहते हो वह भी ज़हर है उसी ज़हर का असर तुमने बादशाह के दिल पर डालना शुरू कर दिया है!"

"अगर हम सब ज़हरीले हैं तो फिर तुम्हें फ़रियाद और शिकायत करने की गुंजाइश ही कहाँ रहती?" वज़ीरे-आज़म ने चुटकी ली।

"तुम सब मुग़ल-सल्तनत को नेस्तनाबूद करना चाहते हो!"

"ख़बरदार!" क्रोधित सिंह की तरह अब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना ने गर्जना की। उसका दाहिना हाथ तलवार खींचने के लिए फड़क उठा।

"यूसुफ़ख़ाँ, हरएक चीज़ की हद होती है, सम्हाल कर बोलो!" वज़ीरे आज़म ने सत्तात्मक स्वर में कहा।

"अति का भला न बोलना—राजाजी ने बिलकुल ठीक कहा है!" शायर ने चुटकी ली।

"राजाजी ?" पागल की तरह किटकिटाते हुए यूसुफ़ चिल्लाया--"राजाजी के सिवा तुम लोगों को दुनिया में कुछ दिखाई ही नहीं देता? ख़ानख़ाना और वज़ीरे-आज़म अपना जोर यहाँ न चलाइये। मैं मुसलमान हूँ; मज़हब के नाम पर फ़ना हो जाना मेरा फ़र्ज़ है; मैं मज़हब की राह पर खड़ा हूँ। कान खोल कर सुन लो—राजाजी मुग़ल सल्तनत का दुश्मन है; बादशाह सलामत को नेकी और इस्लाम के रास्ते से हटा देने की ये उनकी चाल है। मुग़ल सल्तनत और हमारा मज़हब दोनों एक है। राजाजी, उनके ये पिट्ठू और ये सब किताबें आलीजाह को मज़हब से दूर खींच ले जा रही हैं!"

"यूसुफ़, अपनी औक़ात से बाहर न जाओ!" शायर ने ललकारा।

"बादशाह सलामत हमारे मज़हब से दूर होते जा रहे हैं!"

"ख़ामोश यूसुफ़!" वज़ीरे-आज़म ने गर्जना की।

"बादशाह हिंदू होते जा रहे हैं!" यूसुफ़ की द्वेषाग्नि भड़कती जा रही थी।

"यूसुफ़ जबान बन्द कर!" ख़ानख़ाना ने आख़िरी चेतावनी दी।

"मैं मुसलमान हूँ, किसी से नहीं डरता—न रुको ख़ानख़ाना तलवार से मेरे टुकड़े टुकड़े कर दो। मगर मैं कहूँगा, हज़ार बार कहूँगा —बादशाह सलामत हिंदू हो गये हैं!"

ख़ानख़ाना का हाथ तीव्र गति से तलवार की मूठ पर जाते ही विद्युतवेग से रुक गया; मक़तबख़ाने में मानो बिजली कौंध उठी! फ़ैज़ी, अबुलफ़ज़ल अब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना और मकतबख़ाने के सबलोग सामने के दरवाजे में एक नजर से यूसुफ़ की ओर देखते हुए अकबर बादशाह को देखकर भौंचक्के से खड़े रह गये बादशाह की वह तीक्ष्ण दृष्टि किसी के लिए निश्चित रूप से मौत का पैग़ाम थी!

कुछ क्षणों तक मकतबख़ाने में श्मशान की-सी शांति छाई रही; यूसुफ़ ने यन्त्र की तरह चुपचाप बादशाह के आगे सिर झुका दिया।

भय का सन्नाटा एक ही क्षण में वहाँ खड़े हुए सभी सरदारों के दिल में तेज़ धड़नें सुन रहा था।

बादशाह ने मकतबख़ाने को थर्रानेवाली आवाज़ में पूछा—"क्या यही तेरा आखिरी फ़ैसला है यूसुफ़ ?"

यूसुफ़ में सिर उठाने की हिम्मत न थी, लेकिन उसके दिल की आग में उसकी सोच-समझ नष्ट हो चुकी थी; उसने धीरे से ढीठपन के साथ कहा—"जी हुज़ूर !"

यूसुफ़ के इस उत्तर से सब सरदारों की झुकी हुई आँखों के सामने मौत की काली परछाईं आगे बढ़ती हुई दिखाई दी। अब उन्हें विश्वास हो गया था कि किसी का सिर, धड़ से अलग होने ही को है।

किंतु वहाँ की शान्ति भंग नहीं हुई। कुछ क्षणों के बाद बादशाह को बदली हुई आवाज़ सुनकर सबों ने सन्तोष की साँस ली।

"यूसुफ़, मैं बदला ज़रूर हूँ लेकिन हिंदू नहीं, हिंदुस्तानी हो गया हूँ। कान खोलकर सुनले—अकबर बादशाह अपने राज्य में मज़हबी झगड़े पनपने नहीं देगा यह उसका निश्चय है !"

"अल्लाहो अकबर...." शायर फ़ैज़ी के मुँह से अपने आप निकल गया और दूसरे ही क्षण सबों के मुँह से उसकी प्रतिध्वनि सुनाई दी—"अल्लाहो अकबर !'

बादशाह उसी तरह बोलता रहा—"अकबर बादशाह के किये हुए निश्चय को खुदा हमेशा मंजूर करता है; मुझे शक हो रहा है कि कहीं तू यह तो नहीं भूल गया है कि तेरे दादा किसी समय हिंदू थे !"

बादशाह, बिना किसी के उत्तर की प्रतीक्षा किये, तेज़ी से चला चला गया। राजाजी एक तरफ़ खड़े हुए सब कुछ चुपचाप सुन रहे थे; अकबर को कनखियों से देखते हुए फ़ैज़ी ने राजाजी से पूछा—"आज हुज़ूर का हाथ तलवार की मूठ पर आकर कैसे रुक गया ?"

"इसलिए कि यह मकतबख़ाना है !" यूसुफ़ की ओर देखते हुए राजाजी उत्तर दिया और चुपचाप बादशाह के पीछे पीछे हो लिये।

बादशाह का क्रोध बढ़ता जा रहा था। आज उसके लिए भी यह बात अनहोनी थी कि बादशाह का हाथ एक बार तलवार की मूठ पर जाकर रुक जाय। क्रोधित बादशाह के सामने खड़ा होना अपने हाथों अपने को मौत के घाट उतारना था। लेकिन राजाजी इस तरह बादशाह के पीछे पीछे चले जा रहे थे, जैसे कुछ हुआ ही न हो !

छोटी बेगम के अन्तःपुर में आकर बादशाह, घायल सिंह की तरह इधर से उधर टहलने लगा। बादशाह के क्रोध को देखते हुए छोटी बेगम अपने कक्ष में से बाहर आने की हिम्मत न कर सकी लेकिन राजाजी बिना झिझक के ठीक उसके सामने आकर सिर झुकाकर खड़े हो गये। अकबर अपने क्रोध को कम करने का मार्ग सोचते हुए इधर से उधर बड़े बड़े डग मारते हुए बेचैनी से घूम रहा था। बीरबल उसी तरह सिर झुकाकर खड़ा था।

"कुछ बोलते क्यों नहीं राजाजी—?" अकबर ने शांति भंग करते हुए उसी क्रोधित स्वर में पूछा।

"अति का भला न बोलना—" बीरबल ने बहुत धीमे-से स्वर उत्तर दिया।

बादशाह के क्रोध का वेग कुछ अंशों में कम हुआ, किंतु उसका तेज़ी से इधर उधर घूमना कम न हुआ; बोला—"राजाजी, मज़हब के नाम पर जितने अत्याचार और अनाचार होते हैं उतने और किसी बात पर नहीं होते !"

"हमारे इतिहास और पुराण यही तो कहते आये हैं हुजूर !"

"यूसुफ़ मन में यह समझे बैठा है कि वह शाही ज़नानख़ाने का दामाद है तो जो जी चाहे कर सकता है, लेकिन उसने अबतक अकबर को नहीं पहचाना। नहीं राजाजी, मैं मज़हब के नाम पर—एक ग़लत

भावना के नामपर अपने राज्य में इस तरह के अत्याचार और अनाचार नहीं होने दूँगा। राजाजी, मेरा हुक्म है कि अकेला यूसुफ़ ही नहीं, शाही ज़नानख़ाने के तमाम दामादों को शूली पर चढ़ा दिया जाय!"

"बहुत अच्छा आलीजाह! वैसे काम तो एक ही दिन का है, लेकिन कम से कम एक सप्ताह लग जाएगा।" बीरबल ने बिलकुल आज्ञाकारी की तरह अनुमोदन किया।

"एक सप्ताह क्यों?" अकबर का गुस्सा कम होता जा रहा था, लेकिन आवाज़ की सख़्ती कम न हुई थी।

"बात यह है हुजूर, कि दूसरे दामादों के लिए तो यह ठीक है, लेकिन एक शूली तो सोने की बनानी ही पड़ेगी।" बीरबल ने गम्भीर होकर कहा।

"सोने की शूली? किस के लिए?" बादशाह ने क्रोध को कम करते हुए उत्सुक स्वर में पूछा।

"हुजूर, छोटी बेग़म से आपका निकाह शाही ज़नानख़ाने में ही हुआ था, तो आप भी शाही दामाद हुए; कम से कम आपके लिए तो सोने की शूली की ज़रूरत है!"

बादशाह का गुस्सा इस मज़ाक से जाने कहाँ काफ़ूर हो गया। एक पल बीरबल को टकटकी बाँधकर देखने के बाद खिलखिलाकर हँस पड़े।

"बादशाह सलामत, ग़लत मजहबी ज़ुनून के नाम पर जितने अत्याचार और ज़ुल्म होते हैं उतने और किसी चीज़ को लेकर नहीं होते, दुनिया के किसी भी हिस्से में जाकर देख लीजिए!"

बीरबल ने बादशाह का रुख़ पहचानते हुए मीठी चुटकी ली। यह बात बादशाह के दिल पर सीधी जा लगी; उसकी हँसी यकायक रुक गई और गुस्से में खोई हुई समझ फिर वातावरण पर छा गई।

स्नेह से बीरबल के कन्धे पर हाथ थपथपाते हुए बादशाह बीरबल की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखता रहा, फिर तनिक मुस्कराकर

बोला—"राजाजी, एक बात हमेशा भूल जाते हो, वह न भूला करो। बादशाह का कोई दोस्त नहीं होता और कोई उसका दोस्त होकर रह भी नहीं सकता। हमेशा उसकी जान का ख़तरा बना रहता है। तुम्हारी जान सलामत नहीं है!"

"जहाँपनाह, मुझे तो आज इस बात का यक़ीन हो गया कि लोग अपनी जान बचाते हुए डरते क्यों हैं।"

"तस्लीम आलीजाह!" कुछ ही क्षणों पहले शाहज़ादा सलीम इन लोगों की बातें सुन रहा था, धीरे से सिर झुकाकर बोल उठा।

"तशरीफ़ लाइये शेख़ूबाबा, क्या कहना चाहते हैं आप?" बादशाह ने सलीम की ओर देखकर वात्सल्यपूर्ण शब्दों में पूछा।

"आलीजाह, आप हमेशा फ़रमाया करते हैं कि राजाजी सब कुछ कर सकते हैं। इसलिए मैंने आज एक होड़ बदी है। राजाजी से कहिए कि वे कहीं से बैल का दूध एक सेर मँगा दें। दवाई के लिए ज़रूरत है।"

बादशाह एक क्षण के लिए किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गया। जिस तरह कछुआ अपने कोमल अवयवों को अपनी सख्त पीठ के नीचे छुपा लेता है उसी तरह बादशाह के चेहरे पर सख्ती दिखाई देने लगी। शाहज़ादा सलीम का अदब दिखावटी था, उसकी चाल-ढाल में स्वतंत्रता की जगह स्वच्छन्दता दिखाई देती थी; होड़ जीतने के बजाय उसके भावों से दिखावा ज़्यादा साफ़ दिखाई देता था। बादशाह सलीम की ओर देख, सोचने लगा कि यही है उसकी मुग़ल सल्तनत का उत्तराधिकारी। बादशाह के दिल में यह बात यकायक चुभने लगी कि बच्चों की सी झूठी जिद करने वाला शाहज़ादा बादशाहत कैसे चला सकेगा?

बादशाह की हार्दिक वेदना को बीरबल पहचान गया; उसने हँस कर कहा—"तो इसमें कौन सी बड़ी बात है? मैं जल्द से जल्द आपके लिये बैल का दूध ला दूँगा!"

"मुझे इसका यक़ीन था।" कहकर सलीम शाही सलाम करके लौट गया। आज लौटते हुए भी उसकी चाल और उसके शब्दों में उच्छृंखलता अधिक थी। ज़रूर शाहज़ादे को आज कुछ हो गया है। पुत्र प्रेम ने बादशाह को सलीम के लिए आगे कुछ भी न सोचने के लिए मजबूर कर दिया। किंतु हृदय पीड़ित था; दूरदर्शी अकबर को आज अपने पुत्र का भविष्य अन्धकारमय दिखाई दे रहा था।

"हुजूर, इस इत्र का शौक़ फरमाइये; आज ही मँगवाया है।" छोटी बेगम काफी देर से बादशाह के हार्दिक उतार-चढ़ाव को देख रही थी। घबराहट को छुपाने के लिए वह ज्यादा हँसने का प्रयत्न कर रही थी और इसी गड़बड़ी में रूमाल में ज्यादा इत्र पड़ गया और इत्र की एक बड़ी बूँद भूले के एक छड़ पर गिर गई इतना महँगा इत्र फिजूल जाए इस डर से बेगम ने उस बूँद को जल्दी जल्दी अपनी उंगली से उठा लिया और जब उसने बादशाह की ओर देखा तो मालूम हुआ कि वह और बीरबल दोनों, जाने कब से उसकी ओर देख रहे थे। बेगम एक क्षण के लिए हतप्रभ हो गई किंतु उसने अपनी झुंझलाहट छुपाने के लिए बोलना शुरू किया—'आलीजाह, आपने जो बिदौनी जी की फ़ारसी रामायण मुझे दी थी वह बहुत अच्छी किताब है। सच है बादशाह का मतलब......बादशाह का मतलब..."

"कुर्बानियाँ हैं!" बीरबल ने बेगम का अज्ञान छुपाने में सहायता दी। बेगम ने अपने अज्ञान पर हँसते हुए कहा—"सच बात है, बिलकुल सच बात है राजाजी, बादशाह सलामत को क्या कुछ कम कुर्बानियाँ करनी पड़ती हैं?"

"बेगम साहिबा, दुनिया जानती है अगर अलीजाह कुर्बानियाँ न की होतीं तो मुझ जैसे कंगाल और दुःखदायी सेवक रात दिन उनकी सेवा में कैसे रह सकते?"

बीरबल की बात सुन कर बादशाह का हृदय करुणा से भर आया परन्तु उसने कुछ कहा नहीं।

बेगम ने कहा—"राजाजी, आप बादशाह की रामायण क्यों नहीं लिखते ?"

"क्या फरमा रही हैं आप ?" बादशाह ने चकित और क्षुब्ध होकर पूछा।

"क्यों राजाजी, बादशाह की रामायण नहीं लिखी जा सकती ?" बेगम ने बीरबल से उत्सुक होकर पूछा ?

"क्यों नहीं, जरूर लिखी जा सकती है ! अकबरी-रामायण...." बीरबल ने जैसे कुछ सोचते हुए कहा—

"अकबरी-रामायण जरूर लिखी जा सकती है, बहुत अच्छी लिखी जा सकती है बस—"

बीरबल ने कनखियों से बादशाह की ओर देखकर बादशाह की इच्छा जानने का प्रयत्न किया। किंतु उधर बादशाह तीक्ष्ण दृष्टि से बीरबल को नापने का प्रयत्न कर रहा था।

"रुक क्यों गये राजाजी, कह डालिये न—जो कुछ खर्च होगा, दे देंगे।" बेगम ने बादशाह को परोक्ष रूप से प्रसन्न करते हुए कहा।

"बेगम साहिबा, इस में कम से कम एक लाख रुपया खर्च होगा।" बीरबल जानता था कि बादशाह उसी की ओर देख रहा है इसलिए उसने उसी तरह सिर झुकाये हुए कहा—"जैसी आज्ञा बेगम साहिबा की।"

बादशाह जानता था कि इतना अच्छा अवसर हाथ से जानेनहीं दे सकता और यह भी जानता था कि बीरबल रामायण नहीं लिखेगा और बेगम से एक लाख रुपया वसूल कर लेगा।

एक घड़ी पहले जो घटना हो चुकी थी उसका असर अब बादशाह के दिल पर से धीरे धीरे कम होता जा रहा था। बीरबल ने जब जाने की आज्ञा मांगी तो बादशाह ने हँसकर पूछा—"क्यों राजाजी, याद है न आपको कल बैल का दूध लाना है ?"

"आ जाएगा हुजूर!" कुछ हिचकिचाहट के साथ बीरबल ने कहा। जाते जाते उसके पैर आज मन मन भारी हो रहे थे....कारण अकबरी–रामायण न थी; सलीम का मँगाया हुआ बैल का दूध था।

सच पूछो तो बीरबल के लिए चिंता की चीज़ बैल का दूध नहीं, शाहजादा की अजीब माँग थी!

—ॐ—

(१८)

"अकबरी रामायण" रानी ही की हुबहू नक़ल करते हुए राजा ने कहा—"रानी, इसमें घबराने की कोई बात नहीं है; तुम अपने रुपये गिन लेना—रामायण तैयार है!"

बीरबल ने सामने वाले ताक में से एक किताब निकाली। उमा यकायक आश्चर्य और घबराह से दौड़कर उसके पास जा खड़ी हुई और बोली—"यह तो कोरी किताब है मैंने कल ही तुम्हारे लिए इसकी जिल्द बनवाई है और तुम्हें...."

"यही अकबरी रामायण है उमारानी!"

"मैं कह रही हूँ ये कोरी किताब इसमें एक अक्षर भी नहीं लिखा है..." उमा ने बढ़ते हुए आश्चर्य को रोकते हुए कहा।

"पगली, अकबरी रामायण भी कहीं लिखी जा सकती है? यह रामायण पढ़ने के लिए नहीं, जला देने या जमुना में फेंक देने के लिए है!"

"ये क्या मुसीबत है, कुछ समझ में नह आता—" उमा की बेचैनी बढ़ती जा रही थी।

"ये तो कुछ नहीं है रानी, ख़ास मुसीबत कुछ और ही है..." अधूरी बात राजा बीरबल के गहरे निःश्वास से वहीं रुक गई; उमा की

घबराहट और बढ़ गई; कोरी किताब एक ओर रखकर उसने बीरबल को सहानुभूति के साथ नीचे बैठाया।

"बात क्या है नाथ?" पल भर में उमा का स्वर बदल गया।

उमा की घबराहट पर बीरबल मुस्करा दिया फिर तनिक गम्भीर स्वर में बोला—"रानी शाहज़ादा सलीम दिनोंदिन लापरवाह होता जा रहा है और इसीलिए बादशाह की चिन्ता बढ़ती जा रही है और उनकी इस चिन्ता को दूर करने के लिए मैंने भरसक प्रयत्न किया लेकिन आज तो मुझे भी सोलहों आने हार मान लेन पड़ी है!"

"राजा, आठ आने मेरे हैं, हार अधूरी है तुम्हारी!"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि जब मैं किसी चीज़ से हार मान लूँ तभी वह तुम्हारी सोलहों आने हार समझी जाएगी, इतनी सी बात भी तुम्हें मुझे बार बार याद दिलानी पड़ती है?"

बीरबल का मन रानी की इस मीठी-सी चुटकी को सुनकर भर-सा आया। इस उम्र में भी बीरबल की सुख-दुःख की साथिन उमा रोमांचित हो रही थी अपने स्वामी की हार में हाथ बँटाकर। कुछ क्षणों के लिए मौन के साम्राज्य में दोनों एक दूसरे की आँखों में आँखें डालकर देखते रहे। बीरबल का टूटता हुआ साहस फिर दृढ़ होने लगा।

"रानी, बैल का दूध ला सकोगी?"

"क्यों नहीं?" निमिष-मात्र में रानी ने निर्णय कर लिया; षोडशी की तरह उसकी चंचल आँखें नाच रही थीं।

"क्या कर रही हो कुछ सुध-बुध भी है?" राजा के आश्चर्य का ठिकाना न था।

"हरि बेटा—" राजा के जवाब में रानी के पुत्र को पुकारना शुरू किया।

"अरे अब चुप भी रहोगी—लड़के के सामने और क्या सुनाना चाहती हो ?" बीरबल ने घबरा कर पूछा।

"यूँ काँपो नहीं, है तो तुम्हारा ही लड़का !"

"क्या है माँ ?" हरि ने हाँफते हुए पूछा।

"बेटा, देख तेरे पिता जी का सिर दुख रहा है—"रानी ने मुस्कराकर बताया।

"ये कोई नई बात नहीं है माँ—जब तुम उनके पास बैठी हो तो माथा न दुखे तो क्या हो ?"

"शाबाश बेटा !" बाहर से पुराणी चाचा की आवाज़ आई। अचानक दोनों चौंककर उठ बैठे। बूढ़ा लपक कर वहाँ आया और उड़ती आँखों से दोनों को देखकर हरि को खींच कर बाहर ले गया।

"जैसा बाप वैसा बेटा—नटखट मेरा एक भी गुण नहीं सीखा है !" रानी ने बनावटी क्रोध में बुदबुदाया।

"रानी, सचमुच तुम मानती हो इस बात को ?" बीरबल ने यकायक गम्भीर होकर प्रश्न किया।

"क्या ?"

"यही कि बाप जैसा ही बेटा होता है ?"

"सारी दुनिया मानती है इस बात को !" रानी ने तनिक आश्चर्य भरे स्वर में कहा।

"जहाँपनाह नहीं मानते इस बात को, और यही बात मैं उन्हें दरबार में समझाना चाहता हूँ कि जैसा बाप, वैसा ही बेटा !" राजाजी का स्वर गम्भीर होता जा रहा था।

पत्नी ने प्रेम से गद्‌गद् होकर पति का हाथ थामा और उसे भीतर ले गई।

उस रात को, हमेशा की तरह जमाल और कमाल घूमने निकले लेकिन आज उनके साथ छोटा उस्मान भी था घूमते-फिरते दोनों फतह-

पुर सीकरी के प्रसिद्ध तालाब के किनारे पहुँच गये। जमाल अकबर, बार बार कमाल बीरबल और उस्मान सलीम को मुड़ मुड़ कर देख लेता था। घाट के नज़दीक पहुँचते ही बीरबल अचानक रुक गया। और किसी स्त्री की दूर से आती हुई गाने की आवाज़ सुनने लगा। नारी-कंठ की मीठी ध्वनि तीनों को घाट तक खींच लाई। गीत था—

गुरुजन की रसना, और बासना फुलेलँू की,
बोले बिन, खोले बिन, कहौ कैसे जानिये ?
सौदा तो सौदागर का, मजलिस मल्कन की,
गुनिजन गँवार वाको बोल ते पिछानिये
कहत कवि बरिवल, सुनो शाह अकबर,
आदमी की तोल, एक बोल से पिछानिये।

एक स्त्री, धोती की लांग अच्छी तरह कसकर, एक गधे को पानी में खड़ा करके पत्थर के टुकड़े से मल-मल कर उसे जोरों से नहला रही थी; गाते हुए भी उसका ध्यान पूर्णरूप से गधे को नहलाने में ही था। निस्सन्देह वह धोबिन ही थी लेकिन उसका धोबी कहीं आसपास दिखाई नहीं देरहा था। वहाँ वह अकेली थी। तीनों कौतुहल-पूर्वक कुछ क्षणों तक इस स्त्री का क्रिया-कलाप देखते रहे। फिर बीरबल ने साहस करके कुछ कदम आगे बढ़कर कहा—"अरी पगली" ये क्या कर रही है ?"

"पागल तू और तेरा बाप !" धोबिन अचानक गधे को नहलाना छोड़ कर बीरबल पर गुर्राई।

धोबिन के अभिनय में उमा ने ज़रा भी कसर नहीं रक्खी थी। बीरबल ने अपमान का घूँट पीकर रोब गाँठते हुये कहा—"जंगली, ज़बान सँभाल कर बोल !"

"जंगली होगा तू और तेरा बाप !"

अभिनय में पहली बार उमा, बीरबल से कोसों बढ़ चुकी थी। बीरबल को विवश होकर चुप हो जाना पड़ा। मन ही मन कहा—घर तो आ फिर देखता हूँ तुझे !

किंतु बादशाह का कौतुक बढ़ चुका था; दोनों की बातचीत का ढंग देखकर वह तुरन्त ही पहचान गया कि यह सब बीरबल की ही करामात है। उसने शान्तिपूर्वक पूछा—"इतनी रात गये तू गधे को क्यों नहला रही है ?"

"यही समय है गधे को नहलाने का !" उमा धोबिन ने लापरवाही से जवाब दिया। बादशाह का उत्साह और बढ़ा। सलीम यह अपमान न सह सका; बोला—"अरी गधे को नहलाने का यह वक्त हो ही कैसे सकता है ?"

"सच कह रहा है लड़के, यह वक्त गधे को नहलाने का नहीं, गधे को घोड़ा बनाने का है !" कह कर उमा धोबिन ने गधे को और तेजी से मलना शुरू किया।

"क्या कह रही है री ?" अकबर ने आश्चर्य-चकित होकर पूछा।

"यह जरूर बेवक़ूफ़ मालूम होती है !" बीरबल ने अपना अभिप्राय व्यक्त किया।

"बेवकूफ़ तू और तेरा बाप—" उमा फिर बिगड़ बैठी।

"हाँ, हाँ जो कुछ तुझे कहना हो, मुझ से कह, मेरे बाप तक न पहुँच ! कहे देता हूँ...." बीरबल ने अपना बनावटी गुस्सा दबाते हुये कहा।

"आखिर तू कहना क्या चाहती है ?" सलीम ने कुछ समझने के ढंग से पूछा।

"भैया, मैं अपने गधे को घोड़ा बना रही हूँ और यह बीच ही में टपक कर परेशान कर रहा है ! अबे गँवार, जा अपना रास्ता नाप,

अगर कहीं मेरे धोबी ने देख लिया तो हड्डी-पसली सलामत नहीं छोड़ेगा !"

"अरी पर ज़रा सोच तो सही" सलीम ने उसे समझाते हुये कहा—"कहीं गधा भी घोड़ा बना है आज तक ?"

"भैया, जरा तू भी सोच-समझ कर कह—कहीं बैल का दूध भी मिला है आज तक ?" उमा धोबिन ने मशाल के मन्द प्रकाश में आगे बढ़ कर सलीम से कहा। धोबिन को पास से देखते ही अकबर दो डग पीछे हट गया; कन्धे पर से गिरता हुआ दुपट्टा संभालते हुये अकबर उसे कनखियों से देखता रह गया। हूबहू धोबिन सी लग रही थी उमा ! चाल-ढाल, बोलने का लहजा सब कुछ धोबिन जैसा !! कमाल बीरबल कमाल कर दिखाया तेरी रानी ने ! बादशाह उद्‌गार तक आकर रुक गया। पति-पत्नी का यह अभिनय अपने पुत्र के लिए होता देखकर उसका दिल बल्लियों उछलने लगा।

रानी ने बादशाह को प्रणाम किया। जोधाबाई अनेक बार बादशाह से उमा के बारे में कह रही थीं, आज उसे सामने पाकर टकटकी लगाकर देखने लगा।

"क्यों बाई, क्या बैल का दूध नहीं मिल सकता ?" सलीम ने हतप्रभ होकर पूछा।

"यही तो मैं भी कहती हूँ, लेकिन—" उमा ने बीरबल को कनखियों से देखकर कहा—"मेरा धोबी कहता है कि बैल का दूध मिल सकता है और उसका एक अक़्लमन्द दोस्त कहता है कि बैल का दूध ज़रूर मिलेगा साथ ही वह यह भी कहता है कि गधा, घोड़ा भी बन सकता है। भला जब बैल का दूध मिल सकता है तो क्या गधा, घोड़ा नहीं बन सकता ?"

"तेरा धोबी बेवकूफ़ मालूम होता है !" बादशाह ने कहा।

"नहीं मियाँजी, मेरा धोबी बेवकूफ़ नहीं, बेवकूफ़ों की सोहबत में रहता ज़रूर है !" चालक उमा ने बादशाह की भी चुटकी ले ही ली।

अकबर ने अपने आपको सँभाल लिया। लाजवाब उमा एक ही कंकड़ से तीन पंछी मारना चाहती थी। बादशाह को पहचानने के बाद भी उमा ने उसे मामूली जमाल मियाँ समझकर बोलना जारी रखा, बिना किसी हिचकिचाहट के! एक ही वाक्य से वह तीनों की अच्छी तरह ख़बर ले रही थी!

"धोबिन, तेरे धोबी का दोस्त सचमुच होशियार मालूम होता है!" बीरबल ने कहा।

"बेवक़ूफ़ होगा बेवक़ूफ़, गधा भी कहीं घोड़ा बन सकता है...." सलीम ने कहा—"और बैल का दूध..." कहते कहते वह अचानक रुक गया।

"भैया मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि कोई बेवक़ूफ़ शाहज़ादा भी जिस बात को नहीं मानता वही बात मेरा भोला धोबी मुझसे मनवाना चाहता है। उसे धर्म और गप लगाने वालों में अन्ध विश्वास है। धर्म में श्रद्धा करना तो अच्छी बात है, लेकिन वह बेचारा इन मुए साधुओं और फ़क़ीरों के बहकावे में आ जाता है और उसका फल मुझे भुगतना पड़ता है। मियाँ, कुनबे में किसी एक की भूल का नतीजा सारे कुनबे को सहना पड़ता है, क्या करें? मुझे भी आज देखना है कि गधा, घोड़ा कैसे बन सकता है? जाओ भैया अपने रास्ते—" उमा फिर अपने काम में लग गई। सलीम, अकबर का प्यारा शेख़ूबाबा बोलना भूल बैठा था। अकबर और बीरबल ऐसे तटस्थ हो गये कि सलीम अपने को सचमुच मूर्ख समझने लगा। उमा का तीर ठीक निशाने पर बैठा था और उससे सलीम के मर्म स्थान पर चोट लगी थी। उसे यकायक होश आया कि वह अकबर का शाहज़ादा है; घमंड और मूर्खता उसे शोभा नहीं देते; दूसरे की बुद्धि से चलना उसके लिए सर्वनाश का मार्ग है। शाहज़ादा गम्भीरता और बुद्धिमानी से चलकर अपनी शान क़ायम रख सकता है। उसके हृदय में यकायक प्रकाश हुआ।

उमा की बातें सुनकर कमाल मियाँ और जमाल मियाँ के साथ उस्मान ने भी अपना रास्ता नापना शुरू कर दिया; उनके चलते ही गधा जोरों से रेंकने लगा—यह जानना कठिन था कि वह ख़ुश होकर चिल्लाया या जाड़े में ठिठुर कर !

"अरे ठहरो, उसका रुमाल हमारे पास आ गया है; मैं अभी दे आता हूँ !" बादशाह ने उमा की ओर दौड़ते हुए अपने साथियों से कहा। वह घाट पर पड़ा हुआ रूमाल जल्दी जल्दी अपने दुपट्टे में लपेट कर उमा की ओर बढ़ाते हुए बोला—"धोबिन बहन, तुम्हारा यह रूमाल गिर गया था !"

उमा, बादशाह के हाथ की ओर देखती रह गई; रूमाल के बीचोंबीच एक छोटा-सा हीरे का हार था। उसने बादशाह की ओर देखा—उसकी आँखों में कृतज्ञता समाई हुई थी। बादशाह उस समय दैवी पुरुष प्रतीत हो रहा था।

सिर झुकाकर उसने कहा—"गिरे हुए को उठाने वाले को मेरा प्रणाम !"

सलीम और बीरबल—नहीं, उस्मान और कमाल भी तब तक वहाँ आ पहुँचे थे। बादशाह ने कुछ सोचकर मुस्कराते हुए बीरबल से कहा—"कमाल मियाँ, किस धोबी के भाग्य में यह रतन लिखा था !"

बीरबल दाँत किटा किटा कर चुप रह गया लेकिन उमा से तब भी चुप न रहा गया; बोली—"भैया, धोबी के भाग्य की बात कर रहे हो; सब का मैल धोने वाले का भाग्य तो साफ़ सफ़ेद होगा ही !"

"वाह, वाह ! यह ले—" तरुण शाहज़ादा धोबिन के इस सुन्दर वाक्य को सुनकर अपना छद्मवेष न छुपा सका; अपनी छोटी-सी हीरे की अँगूठी ले उसने उमा के हाथ में रख दी !

"देखा जमाल मियाँ ! जैसा बाप वैसा ही बेटा ! बड़े बूढ़ों के वचन झूठे नहीं हो सकते !" बीरबल बोल उठा।

अकबर, सलीम का हाथ पकड़ कर चलने लगा बीरबल ने जाते जाते उमा की कोमल बाँह में ज़ोरों से चुटकी भरी।

"ओ माँ री !" उमा चीख़ उठी।

"क्या हुआ ?" बादशाह ने पलट कर पूछा।

"कुछ नहीं," उमा ने अपने आपको सँभाल कर कहा—"गधा ज़रा हरकत कर बैठा !" उमा ने गधे की ओर हाथ से इशारा करते हुए कहा, यद्यपि उसके हाथ का सही रुख बीरबल की ओर था।

"जानवर की जाति ही ऐसी है, क्यों कमाल मियाँ ?" बादशाह ने पूछा।

"बिलकुल ठीक कह रहे हो मियाँ !" बीरबल को उत्तर देना पड़ा।

"कमाल मियाँ," जमाल चलते चलते कहने लगा—"संसार में धोबिन और धोबी जैसा कोई दुखी नहीं है !"

कमाल मियाँ कुछ जवाब न दे सका; वह बादशाह की तरफ तिरछी नज़र से देखता हुआ चलने लगा।

(१६)

"अल्लाहो अकबर..."

प्रतिदिन प्रातःकाल बीरबल और देवी मिश्र द्वारा सिखाये हुये सहस्रनाम का पाठ करके सूर्योपासना करके प्रातः और सन्ध्या समय नियमित रूप से प्रार्थना करने वाला, दीन-इलाही धर्म का प्रणेता प्रजा-प्रिय अकबर एक छोटे से हौज़ में स्नान कर रहा था; दीन-इलाही के पहले अनुयायी बीरबल ने दीन-इलाही की रीति के अनुसार झुक कर कहा—"अल्लाहो अकबर !"

"जल जलालुह" अकबर ने जवाब में कहा—"पधारिये राजाजी, आते हैं नहाने मेरे साथ ? छोटी बेगम साहबा ने आज खास इत्र से हौज़ भरवाया है !"

"मुझे यक़ीन था हुज़ूर !" बीरबल ने उसी क्षण उत्तर दिया।

हौज से कुछ दूरी पर दो हुज़ूरिया खड़े थे और कुछ गज दूर दो बांदियाँ खड़ी थीं जिनके बीचोबीच छोटी बेगम का आसन था। राजा जी की बात बेगम ने अच्छी तरह सुन ली थी। मन ही मन राजाजी से बैर रखते हुये भी वह उनके साथ हँसी-मज़ाक में शरीक हो जाती और उन्हें हराने की भरसक कोशिश करती थी। इधर अकबर छोटी बेगम और राजाजी के शाब्दिक दाँव-पेंच में काफी रस लेता था और वह राजाजी के आते ही दोनों का वाद विवाद शुरू करने का अवसर ढूँढ़ता रहता था। राजाजी के शब्द सुनकर, अपनी कमजोरी छिपाने के लिए छोटी बेगम ने मुस्करा कर पूछाः—

"आपको किस बात का यकीन था राजाजी ?"

"यही कि आप इस ईरानी इत्र से बादशाह के नहाने के लिये हौज भरवायेंगी, लेकिन जहाँपनाह बूँद से बिगड़ी हुई बाजी हौज़ भरने से नहीं बन सकती !"

बादशाह खिलखिल कर हँस पड़ा। उस दिन इत्र बादशाह को देते हुए जो बूँद गिर पड़ी थी उसकी शर्म छुपाने के लिए ही बेगम को आज इत्र से हौज भरवाना पड़ा था—बीरबल के दिमाग़ से उसका असर मिटा देने के लिए ! लेकिन लाखों का इत्र तो फ़िजूल गया ही ऊपर से यह हँसी ! बेगम गुस्से से लाल-पीली होकर शर्बत पीने के बहाने कमरे में चली गई। बाहशाह ने धीमे स्वर में बीरबल से कहा—"राजाजी, अब झटपट अकबरी रामायण की तैयारी कीजिए, छोटी बेगम साहबा बिगड़ बैठी हैं !"

"यह तैयार है हुज़ूर—" बीरबल ने बगल में से ज़री के कपड़े में बँधी हुई पुस्तक निकालते हुए कहा।

"ज़रा देखूँ तो—" नहाते नहाते भी अकबर ने हाथ बढ़ा कर उत्सुकता से कहा। उसे विश्वास था कि बीरबल 'अकबरी-रामायण' किसी भी हालत में तैयार नहीं कर सकता !"

"हुज़ूर, वैसे तो रामायण तैयार है लेकिन उसमें सिर्फ एक बात की कमी रह गई है; अगर छोटी बेगम एक बात का जवाब दें तो मैं दो घड़ी में 'अकबरी-रामायण' अपके चरणों में लाकर रख दूँ !"

बादशाह ने बीरबल की आँखों से आँखें मिलाईं और खिल-खिला कर हँस पड़ा; उसकी हँसी और आँखें कह रहीं थीं कि वह राजाजी को अच्छी तरह पहचानता है।

"तो पधारो, अभी ही जाकर पूछ लो; मुझे नागरी लिपि पढ़ना आ गया है और अकबरी-रामायण से ही मैं हिन्दी पढ़ना प्रारम्भ करूँगा !" बादशाह ने मुस्करा कर हौज़ में डुबकी ली !

बीरबल, क्रोध के धुएँ में घुटती हुई छोटी बेगम के सामने बाअदब खड़ा हो गया।

"क्या बात है राजा साहब ?" बेगम ने अपनी पूरी शक्ति से क्रोध को दबाकर पूछा।

"बात यह है कि अकबरी-रामायण तैयार है सिर्फ अगर आप एक जवाब फरमाने की मेहरबानी करें तो ये नमकहलाल गुलाम इसी वक्त यह क़िताब खत्म करके आपके क़दमों पर रख सकता है !"

"फ़रमाइये !" स्वर और क्रोध की तीव्रता को दबाते हुए छोटी बेगम ने धैर्यपूर्वक कहा।

"बात यह है कि अकबरी-रामायण में तो नायक आलीज़ाह खुद हैं और यह भी बताने की जरूरत नहीं कि उसकी नायिका आप ही हैं। असली रामायण में नायिका सीतामाता जब चौदह बरस का बन-वास कर रही थीं तब रावण उन्हें जबर्दस्ती उठाकर ले गया था और एक साल तक उन्हें अशोकवाटिका में क़ैद रक्खा था और उन्हें अपनी

मर्ज़ी के मुताबिक पट्टरानी बनाने की हरचंद कोशिश की थी....तो मैं यह जानने की जुर्रत कर सकता हूँ कि आपका भी किसी ने, किसी वक्त हरण किया था या—"

"आबिदा !" सारे महल को हिला देने वाली आवाज़ से बेगम चिल्लाई ! उसके धीरज का बाँध टूट चुका था। क्रोध की तीव्रता में उसने राजाजी की बगल से किताब छीन कर आबिदा बाँदी के शरीर पर दे मारी—

"इसी वक्त इस शैतानियत को आग में झोंक दे और इसी वक्त मैं जवाब चाहती हूँ !"

राजाजी बनावटी विनती करते ही रह गये कि बाँदी ने दौड़ कर धधकती भट्ठी में अकबरी-रामायण की आहुति दे दी ! पुस्तक के राख होते ही उसने छोटी बेगम के पास आकर काँपते हुये कहा—

"बेगम साहबा, वह किताब जल गई !"

"मुझे मालूम था !" कहते हुए बादशाह ने प्रवेश किया। उसे देखते ही फीके मुँह से ऊपरी अफ़सोस दिखाते हुए बीरबल और क्रोध में नागन की तरह फुफकारती हुई बेगम ने सिर झुका दिया।

उसके भाई का कट्टर दुश्मन उसीके कमरे में उसका मज़ाक उड़ाये ? अकबर की चहेती छोटी बेगम की इज़्ज़त का मज़ाक उड़ाये ? छोटी बेगम का छोटा-सा हृदय और छोटी-सी बुद्धि तीव्र क्रोधाग्नि में जलकर एकाकार हो गये। द्वेषाग्नि और धिक्कार की भावना में वह शाही शिष्टाचार भूल बैठी और लपक कर बादशाह के पैरों को पकड़ कर ऊँची आवाज़ से रो पड़ी।

"ख़ुदापरस्त ! किब्ल ओ काबा, इसी वक्त इस नाचीज़ बाँदी का सीना ख़ंजर से चीर डालो; अब इस कमज़ोर की ज़िन्दगी दुश्वार और नाकामयाब मालूम होती है !"

बेगम के क्रन्दन का स्वर तीव्र और ऊँचा था—कारण उसका कुछ भी रहा हो परन्तु इस अप्रत्याशित रुदन ने सारे महल के वाता-

वरण को एक ही क्षण में भयानक बना दिया था। तीव्र पीड़ा से कराहती हुई-सी बेगम का बादशाह के पैरों में इस तरह लोटना हुजूरिये से लेकर बादशाह तक के लिए एक असम्भव घटना थी। बादशाह और राजाजी दोनों मूर्तिवत् देखते रह गये। एक क्षण में ही अकबर ने समझ लिया कि बीरबल के विनोद ने अति गम्भीर स्वरूप धारण कर लिया है किन्तु उसे अपने आपको बुरी से बुरी परिस्थिति में संयम में रखने का अभ्यास था, किन्तु आज उसकी परीक्षा थी; गुलामों और बाँदियों के सामने दिल्ली के बादशाह की चहेती बेगम ज़मीन पर लोट रही थी; उसने अति धीर-गम्भीर स्वर में कहा—"बेगम साहबा, खड़ी हो जाएँ !"

"मैंने जहाँपनाह के क़दम पकड़े हैं, ऐ रहमदिल ! अब वग़ैर कबूल करवाये नहीं छोड़ूँगी—राजाजी या तो यह देश छोड़कर चले जाँय या इस ज़मीन पर मेरी लाश नज़र आये !"

इससे तो यहाँ गाज गिर जाती तो अच्छा होता ! बादशाह के हृदय पर तीव्र आघात था।

किन्तु बेगम आज अपनी पराकाष्टा पर आ पहुँची थी। अब उसे भी लाँघ चुकी थी। उसके क्रन्दन की तीव्रता बढ़ती जा रही थी; उसने बादशाह के पैरों को और ज़ोर से जकड़ लिया और पत्थर के हृदय को भी पिघला देने वाली वाणी में बोली—"दीन दुनिया के मालिक, मैं जानती हूँ कि राजाजी को कभी कोई सज़ा नहीं हो सकती; राजाजी कभी भी, किसी के भी लिए, जो चाहे बोल सकते हैं, जो चाहे कह सकते हैं—राजाजी के लिए कुछ भी नामुमकिन नहीं है क्योंकि बन्दा-परवर की तमाम मेहरबानियाँ उन्हीं पर बरसती हैं। शाहंशाह की सारी शाहंशाहत में सिर्फ़ राजाजी ही आज़ाद हैं—सब कोई इस बात को जानते हैं हुज़ूर, कि उनके लिए देशनिकाले का फ़रमान निकल ही नहीं सकता। बजा यही है कि हुज़ूर अपने ही हाथों से इस नाचीज़ लौंडी को ख़त्म कर दें !—राजाजी सलामत रहें !"

एक क्षण के लिए बीरबल भी अपनी सुध-बुध खो बैठा; बाज़ी सचमुच बिगड़ चुकी थी।

वह मूक होकर, बादशाह का हुक्म सुनने के लिए सिर झुका कर तैयार हो गया। अकबर, क़दमों में गिरकर चीख़ती हुई बेगम को देख रहा था।

"अकबर का पहला हुक्म है कि बेगम साहबा खड़ी हो जायँ!" बादशाह ने गम्भीर स्वर में आज्ञा दी।

छोटी बेगम ने उसी क्षण पैर छोड़ दिये और ऊपर देखा—बादशाह की आँखें सिंह की क्रोधित लाल आँखों की तरह आग बरसा रही थीं, बेगम डरकर एक ओर खड़ी हो गईं। बादशाह मुड़कर जाने को ही था कि यकायक उसकी दृष्टि सिर झुकाकर एक कोने में खड़े हुए यूसुफ़-ख़ाँ पर पड़ी। वह कैसे और कब वहाँ आकर खड़ा हो गया यह किसी को मालूम न हुआ।

"तुम भी मुझसे वचन लेने आये हो?" बादशाह का स्वर शांत था लेकिन उसमें हृदय थरथरा देने की क्षमता थी।

"आलीजाह, रशीदख़ाँ के बजाय इस नमक हलाल ग़ुलाम को काबुल जाने की इज़्ज़त बख़्शी जाय!"

"तुम काबुल जाना चाहते हो?" बादशाह की आवाज़ में हुक्म था।

"हुक्म, ज़िल्लगाह!" जरा भी हिचकिचाये बग़ैर यूसुफ़ ने उसी तरह सिर झुकाये हुए कहा।

"क्यों क्या वजह है—राजा बीरबल?"

"जी हाँ हुज़ूर!" करीब एक लाख बार रट कर तैयार किया हुआ जवाब यूसुफ़ के मुँह से निकल गया; उसने जीवन का मोह छोड़ दिया था। शाहंशाह के सामने, इबादतख़ाना को छोड़कर और किसी जगह मुँह खोलना अपनी गर्दन को धड़ से अलग कर देना था। जो

अकबर, अपने दाहिने हाथ मानसिंह को, जो कि उसका साला भी था, सीधा जवाब देने के जुर्म में उसका गला घोंटने के लिए तैयार हो गया था; वह किसी भी व्यक्ति के द्वारा सीधा उत्तर सुनकर भूखे सिंह की तरह खूँख़ार हो जाता था!

परंतु इस समय बादशाह खून का घूँट पीकर रह गया; न उसने हाथ उठाया; न म्यान से तलवार ही निकाली।

बीरबल ने देखा कि बादशाह आज उसी के मित्र-प्रेम के लिए अपना स्वभाव भूलता जा रहा था; मित्र-प्रेम स्वभाव भले ही बदल दे लेकिन मनुष्य को तो नहीं बदल सकता!

"यूसुफ़ख़ाँ, तुम्हें सज़ाये मौत नहीं मिलती इसी वक्त फ़तहपुर सीकरी छोड़ कर चले जाओ और फिर कभी मुझे अपना मुँह न दिखाना—याद रहे आज से हमारी तलवार तेरे ख़ून की प्यासी रहेगी!"

यूसुफ़ पत्थर बन कर सुनता रहा; तिलभर न डिगा।

बादशाह जा चुका था, लेकिन बीरबल उसी तरह चुप खड़ा मर्माहत होकर।

बादशाह ने आजतक बीरबल और अपने बारे में जो कुछ अफ़-वाहें सुनी थीं वह सब आज उसके कानों में सौगुनी होकर गूँजने लगी। मानो दरबार के सभी अमीर-उमरा और मनसबदार उसकी ओर दौड़ते हुए चीख़ रहे थे—"आलमपनाह बादशाहत छोड़ सकते हैं मगर बीरबल को नहीं छोड़ सकते!"... "हुज़ूर राजाजी के गुलाम हैं!"... "एक बार भी किसी ने बादशाह को बीरबल पर नाराज होते देखा है? ....और उसके जवाब में पटाखे की तरह आवाज़ें फूटने लगीं...' बादशाह सलामत का दिल कमजोर है! प्यार नहीं, दोस्ती अन्धी है... बीरबल ने बादशाह को काफ़िर और बुत-परस्त बना दिया है.... ख़ुदा ने हिंदुस्तान के बादशाह को दो आँखें बीरबल ही को देखने के लिए बख़्शी हैं!"...

दिल में उठे हुए इस तूफ़ान ने अकबर को अधीर बना दिया था; उसके दोनों हुज़ूरिये अतग और कल्याणमल हाँफते हुए उसके पीछे पीछे दौड़ रहे थे।

बादशाह के पैर रखते ही दफ़्तरख़ाना में बैठे हुए सभी उठ बैठे। वज़ीरे-आज़म अबुलफ़ज़्ल सलाम करके आगे आ खड़ा हुआ।

बादशाह के बाल बिखरे हुए थे; उसके चेहरे पर वह क्रोध अभी तक विद्यमान था जो कि बड़े से बड़े वीर के भी हौसले परस्त करदे। फिर भी मालूम होता था कि बादशाह में बंदूक या तलवार हाथ में लेने का साहस नहीं है।

"वज़ीरे-आज़म राजा बीरबल के नाम इसी वक्त फ़रमान निकाला जाय..."

सभी के आश्चर्य का ठिकाना न रहा; वहाँ की स्तब्धता बिजली की कड़क के बाद होने वाली स्तब्धता थी।

वज़ीरे-आज़म ने अपने आपको सँभाल कर शान्त स्वर में पूछा—"जहाँपनाह का फ़रमान..."

"कि आज शाही दरवाजा बन्द होने से पहले राजा बीरबल यह शहर छोड़ कर चले जायँ!"

बादशाह एक क्षण भी न रुक कर जोधाबाई के महल की तरफ चल पड़ा।

दफ़्तरखाना निस्तब्ध तो था, निष्प्राण हो गया!

●

(२०)

"मैं नहीं मानती इस बात को—मानी ही कैसे जा सकती है? जहाँपनाह आपसे कभी नाराज नहीं हो सकते!" उमा ने झरोखे में बैठे हुए राजा बीरबल का कन्धा झकझोरते हुए व्यक्त किया।

"यही तो मुसीबत है, अगर वे मुझसे नाराज़ हुए होते तो फिर बात ही क्या थी, इस बार वे अपने आपसे नाराज़ हो गये हैं, उनका क्रोध आज अपने आप पर बरस पड़ा है !"

"तो फिर ?"

"रानी, यही बात मैं इतनी देर से सोच रहा हूँ कि फिर क्या होगा ? दुनिया में सब से ज्यादा सुखी या सब से ज्यादा दुःखी व्यक्ति अगर कोई है तो वह सम्राट् है ।"

"बादशाह इतने दुःखी हैं फिर भी आप उनसे क्षमा माँगने न गये; अगर फ़रमान सुनते ही सीधे उनके चरणों में जाकर गिर जाते तो कितना अच्छा होता—कब से कह रही हूँ मैं आपसे, जाइये एक बार उनसे मिल लीजिए !"

बीरबल ने इस बार स्नेहपूर्वक उमा की ओर देखा; इतनी बड़ी चिन्ता का बोझ जैसे कुछ हल्का-सा प्रतीत हुआ। पत्नी की आँखों में आँखें डालकर वह मुस्करा दिया ।

उमा के लिए यह समय मुस्काने का नहीं था; अपनी स्वाभाविक प्यार-भरी चिढ़ दिखाते हुए वह हाथ जोड़कर बोली—"पंडितजी, सच-मुच हाथ जोड़ लेती हूँ तुम्हारे आगे । दुःख का पहाड़ टूट पड़ा है और तुम्हें हँसी सूझी है—मुझे जवाब दो, क्यों नहीं गये तुम वहाँ सीधे बादशाह के पास ? भले ही मित्र के रूप में, उनसे मिलते हुए तुम्हें हिचकिचाहट होती, लेकिन मनसबदार या राजा के तौर पर उनसे क्षमा माँगने में शर्म कैसी ?"

"धर्म जिस व्यक्ति का प्रातःकाल मुखदर्शन करने की आज्ञा देता है उस प्रजावत्सल शाहंशाह के चरणों में गिरते शर्म किस बात की ?" बीरबल उमा की बात सुनकर यकायक गंभीर हो गया था ।

"तो फिर तुम गये क्यों नहीं ?"

"गया था !" बीरबल ने अपना सिर झुकाते हुए शान्त स्वर में उत्तर दिया।

"गये थे तुम ? फिर क्या हुआ ?" उमा ने उत्कंठा पूर्वक पूछा।

"उन्होंने मुझसे मिलने से इन्कार कर दिया !"

उमा की उत्कंठा यकायक आश्चर्य में बदल गई—"मैं नहीं मानती इस बात को—बिलकुल नहीं मानती !" फिर उत्साहित होकर बोली—"जो क्षमा माँगने के लिए उनसे मिलना चाहे, बादशाह उसे इनकार नहीं कर सकते, कदापि नहीं !"

"शायद अबुलफ़ज़ल भी यही कह रहे थे !" बीरबल ने उसी गम्भीर स्वर से कहा।

"मैं मान नहीं सकती !" उमा के स्वर में बालकों की-सी हठ थी।

"तुम नहीं मानती, पर मैं मानता हूँ; मुझे पहले से ही विश्वास हो चला था कि शाहंशाह अब मुझे नहीं मिलेंगे !"

"हिन्दुस्तान के बादशाह की मित्रता साधारण-सी बात नहीं है; वे मित्र को इस तरह अपमानित नहीं कर सकते !"

"इसीलिए वे मुझ से नहीं मिले; बहुत अच्छा हुआ जो उन्होंने इनकार कर दिया।"

"बहुत अच्छा हुआ ?" उमा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

"हाँ रानी, बहुत अच्छा हुआ ! अब दुनिया जानेगी कि अकबर बादशाह अपने परमप्रिय मित्र को गिनती के क्षणों अपने से दूर फेंक सकता है !" बीरबल ने कहने के बाद आँख उठा कर देखा तो उमा दूर जा खड़ी हुई थी।

उमा के पास जा कर बीरबल ने पूछा—"क्या कर रही हो रानी ?"

"शाही दरवाज़ा बन्द होने से पहले हमें इस शहर से बाहर हो जाना है !"

"हमें ?"

"हाँ, राजा बीरबल अर्थात् पंडित महेश और उमा! राजा सच-सच बताना क्या तुम अकेले हो ?'

"रानी !" उमा को दूसरी ओर जाने से रोक कर बीरबल ने कोमल स्वर में कहा—"इन बच्चों को कहाँ छोड़ेंगे हम ?"

"ब्याहते समय मैंने तुम्हारी देख भाल करने की प्रतिज्ञा की थी, इन बच्चों की नहीं—"रहेंगे अपने ननिहाल में इतने सारे धन का क्या करना है ?"

"बच्चे अपने माँ-बाप को छोड़कर रहेंगे ?" बीरबल की कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

"उनके सच्चे माँ-बाप पुराणी काका हैं, उन्हीं के पास रहेंगे आनन्द से !" बिना किसी विचार या चिन्ता के, उमा ने कह डाला और फिर यात्रा का सामान जुटाने लगी।

बीरबल भी उसके साथ हो लिया और बरसों के बाद पतिपत्नी यात्रा की तैयारी में एक दूसरे का हाथ बँटाने लगे; बीरबल की चिन्ता दूर हो चुकी थी और उमा मौज मज़े में आकर स्फूर्ति-पूर्वक सामान इकट्ठा करने में लगी थी।

ये दंपति इधर अपनी यात्रा की तैयारी में लगे थे और उधर दूसरे दंपति एक गम्भीर समस्या को, गम्भीर वातावरण में, सुलझाने के लिए व्यस्त थे।

यद्यपि जोधाबाई किसी दिन राजनीति में दखल नहीं देती थी लेकिन आज उसके लिए यह एक व्यक्तिगत समस्या आ खड़ी हुई थी; अकबर झरोखे में खड़ा होकर नगर के राजमार्ग पर दृष्टि जमाये खड़ा था और जोधाबाई उसे समझा रही थी।

"स्वामी वे राजाजी ही हैं जिन्होंने शाहज़ादे को बिना उनको मालूम हुए, रस्ते पर लगाया है, और आपको प्रसन्न रखने वाला इस संसार में राजाजी के सिवा कोई नहीं है !"

"मैं समझता हूँ !" अकबर ने संपूर्ण स्वीकृति से उत्तर दिया।

"वज़ीरे-आज़म अबुलफ़ज़ल और महाकवि फ़ैज़ी के सबसे प्रिय-मित्र राजाजी हैं !"

"यह भी मैं जानता हूँ।" अकबर मानो उत्तर के लिए पहले से ही तैयार था।

"...और हुज़ूर, राजाजी ही बादशाह और बादशाहत के बीच की मज़बूत जंजीर हैं !"

"मैंने इस बात से किसी दिन इनकार नहीं किया।" अकबर का स्वर द्रवित था।

"तो प्राणनाथ, लौटा लीजिए अपना फ़रमान !"

"यह नहीं हो सकता महारानी, कभी नहीं !" इस बार अकबर के स्वर में फिर दृढ़ता थी। जोधाबाई के द्रवित स्वर के परिणाम की संपूर्ण आशा को इस बार अकबर ने मटियामेट कर दिया; उसकी दृढ़ता तनिक भी कम नहीं हुई थी।

किन्तु जोधाबाई इस तरह हिम्मत हारने वालों में से नहीं थीं, उसके सिवा शायद कोई नहीं जानता था कि बादशाह के लिए बीरबल का मूल्य क्या है। उसने अपनी संपूर्ण कोमलता, आर्द्रता और अनुनय को गले भर में कर कहा—"स्वामी, भारत-सम्राट के नवरत्नों में से एक के अलग होजाने पर शेष आठों खंडित हो जाएँगे; आपका सच्चे से सच्चा और प्रिय मित्र राजाजी से बढ़कर कोई नहीं है।"

"सबसे प्रिय मित्र !" अकबर ने फीकी मुस्कान के साथ महारानी की ओर देखकर उसी के शब्दों को दोहराया—"महारानी, तुम तो अच्छी तरह जानती हो कि एक धोबी की निन्दा के कारण भारत के प्रसिद्ध सम्राट, मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी ने सीता को त्याग दिया था, तो मैं अगर सब मनसबदारों, सरदारों और मौलवियों की निन्दा के कारण अपने प्रिय मित्र को देशनिकाला देता हूँ तो इसमें कौन सी

बड़ी बात है? ....राजाजी कहते हैं कि बादशाह बादशाहत का चौकीदार है! महारानी, मैं अपनी औलाद के नाम पर यह कलंक लगाना नहीं चाहता कि अकबर अपने प्राण की तरह प्यारे मित्र को सज़ा न दे सका।"

"परन्तु राजाजी निर्दोष हैं!"

"निर्दोष! नहीं महारानी, राजाजी ने अपराध किया है—बहुत बड़ा अपराध!"

"कौन सा अपराध जहाँपनाह?" जोधाबाई ने स्वर में उत्सुकता के साथ आश्चर्य भी था।

"राजाजी बादशाह के सबसे प्यारे दोस्त हैं, मैंने उनसे कई बार कहा कि राजाजी बादशाह की दोस्ती खतरनाक होती है लेकिन राजा जी ने मेरी बात न मानी!"

"धन्य है राजाजी की स्वामिभक्ति, उनकी श्रद्धा!" जोधाबाई ने आवेश में आकर कहा—"मैंने उनसे एक दिन पूछा कि राजाजी सच सच बताइये-इन्द्र बड़े हैं या बादशाह?"

"फिर क्या कहा राजाजी ने?" अकबर ने अपनी दृढ़ता भूलकर उत्सुक स्वर से पूछा।

"बादशाह इन्द्र से बड़े हैं!" जोधाबाई ने उत्तर दिया।

"झूठ! ख़ुशामदी कहीं के!" अकबर के मुँह से निकल गया।

"मैंने भी यही शब्द, बिलकुल यही शब्द कहे लेकिन उन्होंने ज़ोर देकर कहा था कि यही सच है!"

"कैसे?" बादशाह की उत्कण्ठा बढ़ रही थी।

"ईश्वर ने एक दिन तराज़ू के एक पलड़े में इन्द्र का और दूसरे में आपका नाम रक्खा, आपका पलड़ा भारी था इसलिए नीचे आ गया और आपको पृथ्वी का राज्य मिला, इन्द्र का हलका पलड़ा ऊपर रह गया इसलिए उसे स्वर्ग का राज्य मिला!"

बादशाह के चेहरे पर से कठोरता अदृश्य हो चुकी थी; मुस्करा-कर उसने भी इसी तरह अपनी एक पुरानी स्मृति का स्मरण करते हुए कहा—"महारानी, बोलने में राजाजी को कोई नहीं जीत सकेगा! एक दिन मैंने हाथीख़ाना के सामने धरती पर एक लकीर खींच कर कहा कि इसे छुए या मिटाये बग़ैर छोटी बना दो! राजा मानसिंह और टोडरमल और ख़ानख़ाना सोच सोच कर हारे पर किसी रत्न की चमक इतनी तेज न थी कि उन्हें कुछ सूझे! अचानक उसी समय राजाजी आ पहुँचे और उन्होंने मेरी खींची हुई लकीर के पास उससे बड़ी लकीर खींच कर कहा—"लीजिये खुदावन्द मैंने न उसे छुआ न मिटाया आप की लकीर छोटी है!" महारानी, राजाजी में विद्वत्ता है, समझ है, तीक्ष्ण-बुद्धि, निडरता और भक्ति है और ये ही सब उनके भीतरी शत्रु हैं!... और फिर तुम्हीं कहो, बादशाह की दोस्ती क्या खतरनाक नहीं होती? नहीं महारानी, राजाजी को अपने मित्र प्रेम की सजा भुगतनी ही पड़ेगी—जरूर भुगतनी पड़ेगी।

बादशाह अधिक देर स्थिर न रह सका, उठ खड़ा हुआ। जोधाबाई व्यथित होकर बादशाह की हार्दिक पीड़ा को चेहरे पर अंकित होते हुए देख रही थी; सहानुभूति और करुणा के आवेग में उसकी आँखें भर आईं। उसका नारी-हृदय तीव्र आवेश में आकर पूछ रहा था—"क्या बादशाह भी निराधार हो सकते हैं? क्या बादशाह भी रो सकते हैं?"

रात हुई। शहर से बाहर 'शैतानपुर' में राजसी वेश्याएँ और गायिकाएँ अपनी मादक मुस्कान और गीत लहरियों से इस धरती पर तथा कथित स्वर्ग का निकटतम आभास कराने का प्रयत्न कर रही थीं।

अकबर के हुक्म से वेश्याओं के लिए शहर से बाहर शैतानपुर नामक बस्ती बसा दी गई थी; किसी भी वेश्या को शहर में रहने की आज्ञा न थी। दिन की मेहनत से थके माँदे रसिक नागरिक रात के अँधेरे में जी बहलाने यहाँ आ जाया करते थे किन्तु प्रत्येक व्यक्ति

पर शाही जासूसों की निगरानी रहती थी। एक बार इसी शैतानपुर में इस चतुर वेश्या ने छद्म वेश में घूमते हुए बादशाह को दुत्कार कर बीरबल को स्वीकार किया था और यही वह जगह थी जहाँ जमाल-मियाँ और कमालमियाँ ने बहुत से मूर्ख युवकों को मज़ाक से ताने कसकर विनाश की ओर जाने से बचा लिया था।

आज जमालमियाँ अकेला दिखाई दे रहा था। घूमते घूमते उसकी दृष्टि एक बहली (रथ के आकार की एक छोटी गाड़ी) पर पड़ी और वह लपक कर शहर के सिंहद्वार के पीछे छुपकर खड़ा हो गया। रथ के पीछे पीछे यात्रियों की वेशभूषा में पण्डित महेश ने अन्तिम बार शहर की ओर देखा और देखता रह गया। सिंहद्वार के पीछे छुपे हुए जमालमियाँ ने घोर अँधेरे में अपने परम प्रिय साथी कमाल को अपने से कुछ ही क़दम दूर पर वियोग की व्यथा में डूबते-उतराते देखा; दौड़कर उसके गले से लिपट जाने को उसका मन उतावला हो गया किन्तु—किन्तु....

किसी समय था वह कमाल मियाँ और था राजा बीरबल, किन्तु आज वह एक साधारण यात्री पंडित महेश था, दूर दिखाई देने वाले राजमहलों को टकटकी लगाकर देख रहा था। धीरे धीरे उसका मस्तक झुक गया, वहाँ की धूल उठाकर उसने ललाट पर लगाई और जल्दी जल्दी रथ में बैठी हुई उमा के पास जाकर बैठ गया।

अँधेरे में यह जाना नहीं जा सका कि कमाल और जमाल की आँखों में आँसू थे या नहीं। रथ के कुछ दूर निकल जाने पर सिंहद्वार के बीचोंबीच एक मनुष्याकृति स्थिर दिखाई दे रही थी। रथ में बैठे हुए पंडित महेश ने उसे देखा।

●

"अकबर मुसलमान नहीं है !"

राजनीति कुशल यूसुफ़ख़ाँ ने अपने बैर की ज्वाला शान्त करने के लिए धर्म रक्षक मुसलमान का बाना पहन लिया था। भोले भाले लोगों को धर्म के नाम पर अपने स्वार्थ का साधन बनाना सदियों पुराना उपाय है। यूसुफ़ जिस जोश के साथ इस्लाम की दुहाई दे रहा था, वह सीधे सादे पठान तो क्या, किसी भी मुसलमान को कुर्बानी के लिए उभारने को काफ़ी था।

इस समय वह पठानों के एक बड़े 'जिरगा' में जोर-शोर से चिल्ला रहा था; आज वहाँ चारों ओर के पठान आकर हज़ारों की संख्या में इकट्ठे हुए थे। उन दिनों पठानों में पीर रोशन का एक नया पंथ निकला था और यूसुफ़ ने उसी का सहारा लिया था। वह एक महीने से उस पहाड़ी देश के एक गाँव से दूसरे गाँव भटक रहा था; राजा बीरबल के प्रति बैर का बदला लेने के लिए वह पठानों को इकट्ठा करके अकबर के विरुद्ध द्रोह करने के लिए भड़का रहा था। 'रोशनाई' पठान तो धर्म के नाम पर पहले ही से उसके साथ थे, अब दूसरे पठान भी उसे मानने लगे थे। इस तरह धीरे धीरे यूसुफ़ख़ाँ अपने षड्यन्त्र में सफल होता जा रहा था। आज से पहले बहुत से 'जिरगा' हो चुके थे। और हजारों पठान यूसुफ़ के नेतृत्व में एकत्रित हो रहे थे।

"इस्लाम के पाक बन्दो ! अकबर मुसलमान नहीं है—न वह हिन्दू है, न वह ईसाई है—वह किसी मज़हब को नहीं मानता, वह काफ़िर (नास्तिक) है !"

"उसे नेस्त-नाबूद कर दिया जाय !" 'रोशनाई' पठानों की एक टुकड़ी ने आवाज़ दी।

"अकबर की सल्तनत में इस्लाम सलामत नहीं है !" यूसुफ़ की चिल्लाहट जारी थी।

"उसे हटा दिया जाय !" दूसरी टुकड़ी ने जवाब दिया ।

"हिन्दुस्तान का शाहंशाह इमामों को नहीं मानता, मौलवियों को उसने भगा दिया है, शेख़ और सैयद उसके ख़ौफ़ से मुँह छुपाते फिरते हैं, मर जाते हैं या हज को चले जाते हैं । बुन्देलखण्ड में इस्लाम के गिरते हुए झण्डे को ऊँचा रखने के लिए पाक मुसलमानों ने इस बात का एलान किया है और उनके इस कामका बीड़ा तुम जैसे जवाँमर्दों को उठाना है !"

"रोशनाइयो ! क़सम लो साईं की कि काफिरों की मौज-मस्ती का शिकार हम इस्लाम को नहीं होने देंगे; उससे पहले आबाद शहर बर्बाद होंगे, बर्बाद रियासतें आबाद होंगी, रब के नाम पर क़ुर्बान हो जानेवाले ख़ुदा के बन्दे गाज़ी दहाड़ उठेंगे, इसलामी शमशीर नालायकों को धरती पर सुला देगी और रसूल के पाक बन्दे नीला झण्डा हाथ में लेकर इस मुल्क के एक कोने से दूसरे कोने तक उसे फहरा देंगे ! वे बन्दे इस जिरगे में तैयार खड़े हैं !"

"रोशनाइयो ! ख़ाकसारो !! आज इस आस्मान और इस ज़मीन को फ़तह के ऐलान भरकर बता दो कि हिंदुस्तान के गुमराह बादशाह को नेक राह पर लाने के लिए और अगर वह न आये तो बदी को हमारी राह में से हमेशा के लिए मिटा देने के लिए बहादुर पठान तैयार खड़े हैं !"

और इस चुनौती के जवाब में आस्मान को हिला देने वाली आवाज़ से जिरगा ने जीत का ऐलान किया !

यूसुफ़ का हृदय अनिर्वचनीय आँसू से नाच उठा !

"क्या बात है अब्दुल्ला ?" जुनून में झूमते हुए जिरगा के बीचों-बीच खड़े हुए यूसुफ़ ने घोड़े पर से जल्दी जल्दी उतर कर उसके पास आये हुए अब्दुल्ला से पूछा । अब्दुल्ला ने उसके कान में कुछ कहा, जिसे सुनकर कुछ क्षणों के लिए यूसुफ़ गम्भीर हो गया फिर उसी तरह उत्तेजित होकर चीख़ने लगा । पठानों की सल्तनत छीन लेने वाले

मुग़लों को हराने का ख़्वाब देखने वाले, चन्द विद्रोही सरदारों के इशारों पर नाचने वाले, हज़ारों पठान फिर ध्यान से सुनने लगे।

"ख़ुदा हमारे साथ है ! भाइयो ! हाथ में तलवार और ज़बानपर अल्लाह का नाम लेकर क़ुर्बान हो जाने वाले ख़ुदा के बन्दे मुल्क के एक कोने से दूसरे कोने तक मौजूद हैं ! मैं तो आपका एक नाचीज़ गुलाम हूँ। बहादुर पठानो ! क्या जवाब है आपका ?"

यूसुफ़ का तीर ठीक निशाने पर लगा; वह पक्का खिलाड़ी था।

"तलवार" सारा जिरगा एक आवाज़ से चिल्ला उठा।

यूसुफ़ मानो हवा में तैर रहा था; जिरगा ख़त्म होने से पहले उसने फिर ऐलान किया—"अल्लाहो अकबर !"

"अल्लाहो अकबर !" जिरगा ने फिर पूरे जुनून से जवाब दिया।

जिरगा ख़त्म होते ही यूसुफ़ ख़ास-ख़ास सरदारों को लेकर सलाह-मशविरा करने बैठा।

हिन्दू-मुस्लिम मतभेदों को दूर करने का प्रयत्न रामानन्द के शिष्य सन्त कबीर ने किया था और उसके बाद दूसरा प्रयोग किया अकबर ने। हिन्दू-मुस्लिम एकता को सुदृढ़ करने के लिए उसने आपस में विवाह की प्रथा प्रारम्भ की और अन्त में सब ही पोंगापन्थी धर्मों के आडम्बर से ऊबकर अकबर ने अपना 'दीन-इलाही' धर्म प्रवर्त किया था जिसमें इस्लाम, ईसाई, पारसी, जैन, बौद्ध आदि सभी धर्मों के सुन्दर सिद्धांतों का समावेश था। 'दीन-इलाही' में उन इस्लामी मौलवी, उलेमा और इमामों का साफ़ तौर पर बहिष्कार किया गया था जिनके झूठे ढोंग बादशाह को बिलकुल नापसन्द थे, यही कारण था कि सभी कट्टर मुसलमान बादशाह को इस्लाम-विरोधी मानते थे और भोलेभाले मुसलमानों को अकबर के विरुद्ध उभारने में उन्हें पर्याप्त सफलता मिलती थी।

इधर अफ़ग़ानिस्तान हिन्दुस्तानी बादशाह की सल्तनत में था। समरकन्द और बुख़ारा तक अकबर के सिक्के चलते थे। जब अफ़ग़ा-

निस्तान की राजधानी काबुल में मिर्ज़ा मुहम्मद हुसैन का देहान्त हुआ तो विद्रोहियों ने राज्य पर कब्ज़ा जमाने की कोशिश की। यहाँ तक कि काश्मीर के सुलतान ने भी अपने को एक तरफ़ समझकर अकबर के विरुद्ध सिर उठाने की हिम्मत की थी। इन दोनों प्रदेशों को विद्रोहियों से मुक्त करने के लिए ख़ुद अकबर को अपनी फ़ौज़ और दफ्तर को साथ लेकर लाहौर में डेरा डालना पड़ा था। वैसे भी बीरबल के चले जाने पर फतहपुर सूना-सूना मालूम होता था और शहर ने मानो नूर खो दिया हो इस तरह पानी की कमी भी सताने लगी थी। बादशाह को हमेशा के लिए फतहपुर सीकरी छोड़ना पड़ा। उसने पहले ह अपनी कचहरी आगरा भेज दी थी।

लाहौर में डेरा डालते ही अकबर ने अपने चुनिन्दा सिपहसालारों को, पंजाब और अफ़ग़ानिस्तान को हमेशा के लिए अपने साम्राज्य में रहने देने के लिए, सिपाहियों के साथ रवाना कर दिया।

अफ़ग़ानिस्तान और काश्मीर में विद्रोह की चिनगारी फूट ही रही थी कि पूर्व में धर्मांध उलेमाओं ने भी धर्म के नाम पर लोगों को विद्रोह के लिए भड़काना शुरू कर दिया था। समय समीप आता जा रहा था; यूसुफ़ को अपना स्वप्न सफल होता दिखाई देता था। शाही फौज हिन्दुस्तान में चारों ओर बिखरी पड़ी थी और ऐसे में पठान एक साथ मिलकर धावा बोल़ दें तो उसके लिए पौ बारह थो! उसे लगा कि विजय उसकी मुट्ठी में है

पठान सरदारों की गुप्त बैठक में सबसे पहले अकबर की बात निकली।

"अब हमें क्या करना चाहिए?" एक बूढ़े पठान ने पूछा।

"प्यासे के सामने अगर पानी रखो तो क्या किया जाय? भूखे पठान के सामने अगर तलवार हो और बकरा बँधा हो तो वह क्या करेगा? भाइयो! हिन्दुस्तान का शाहंशाह सबों के बजाय हमारे ज्यादा

नज़दीक है—सब रोगों की एक दवा हमारे पास है—अकबर को ज़िंदा पकड़ लिया जाय !" यूसुफ़ ने युक्ति सुझाई ।

"इन सारी मुसीबतों को जड़ से काट दिया जाय !" दूसरा बोला ।

"अरे अकबर को ही काट डाला जाय ।"तीसरे ने कहा ।

"नहीं इस मुग़ल बादशाह को पकड़ कर यहीं लाया जाय और जिन्दा दफ़ना दिया जाय !" चौथे का जोश बोल रहा था ।

"दस हजार पठान इसके लिए तैयार हैं !" उन सबों के मुखिया ने कहा ।

"सुबह होते ही पठानी बन्दूकें क़हर बरसाने के लिए तैयार हो जायँ ! एक आवाज़ आई ।

"नहीं, अकबर बादशाह को जिन्दा पकड़ लाना और जिन्दा दफ़ना देना हँसी खेल नहीं है; तलवार पर सान चढ़ाने से पहिले हमें बुद्धि को कसौटी पर कसने की जरूरत है; फौज को बादशाह से अलग हो जाने दो फिर हम दस हजार नहीं बीस हजार पठानों को साथ लेकर शाही छावनी पर धावा बोल देंगे ! रोशनाइयो ! ख़ुदा ने हम को सीधी राह दिखा दी है, फ़तह हमारी है ! बस, बीस हजार पठान और मैं कहूँ वह वक्त—इतना ही मुझे चाहिए !"

यूसुफ़ ने सिपहसालार के तौर पर हुक्म देकर माँग की ।

सब एक साथ चिल्ला उठे—"मंजूर है !"

अब्दुल्ला विमूढ़ होकर यह सब देख रहा था; धीरे धीरे उसके हृदय में भय का संचार होता जा रहा था । उसे आज तीव्र आघात के साथ ज्ञात हुआ कि बादशाह की मौत का भी विचार किया जा सकता है !

पठान आज़ाद थे; क्या वे मनचाहा कर सकेंगे ? उनका यह कृत्य उचित होगा ??

अनेक प्रश्न धर्मभीरु अब्दुल्ला के हृदय में आतंक उत्पन्न करने लगे; आज तक यूसुफ़ का दाहिना हाथ समझा जाने वाला अब्दुल्ला भविष्य की कल्पना करके थर्राने लगा !

अकबर अत्याचारी नहीं था; हत्यारे के लिए वह सहानुभूतिपूर्वक विचार करता था। वह नेक और बहादुर था – क्या कारण है कि ये सब आज उसी के प्राण लेने को उतावले हो रहे हैं ?

सबों के लिए समान व्यवहार करना अपराध है ? सबको समान रूप से स्वतन्त्र करने की आकांक्षा रखने वाला क्या मौत के घाट उतारने के योग्य है ? प्रजाप्रिय अकबर को स्वेच्छा से चाहने वाली प्रजा की— जिसके पास हिन्दू-मुसलमान सभी समान रूप से थे, रक्षा करने वाले अकबर की हत्या करना कहाँ तक उचित है ?

अब्दुल्ला जो सैयद था, जो धर्म और सत्य के नाम पर मिट जाने के लिए सदा तैयार रहता था, विद्रोहियों के बीच अपने आप को देखकर इस समय घृणा से धरती में समा जाना चाहता था। बादशाह की महानता का विचार करते ही उसका हृदय भर आया; इस मनो-मंथन से उसके दिल में पवित्र भावनाएं उभर आईं।

जिरगा खत्म होते ही वह अपने मुँह पर हाथ रख कर जोर से रो पड़ा। "लाखों मर जाएं लेकिन लाखों का पालनहार न मरे"—यही रट उसके मन में लगी थी। अपनी भूलों के प्रायश्चित और बादशाह की शुभ कामना के लिए उसकी गर्दन खुदा की बन्दगी में झुक गई।

उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे और मुँह से धीरे धीरे निकल रहा था—"अल्लाहो अकबर ! अल्लाहो अकबर !"

●

"हुज़ूर, पास वाले देहात से कुछ ब्राह्मण और मुसलमान जुलाहे आपके दर्शनों के लिए आये हैं और ईरान के राजदूत कुछ अमीरों के साथ आपके लिए सौगात लेकर आये हैं..."

अकबर के हुजूरिया कल्याण मल ने रावलपिंडी के पास बसाई हुई फौजी छावनी के बीचोंबीच बनाये हुए शामियाना में बैठे हुए अकबर से कहा।

"पहले देहातियों को भेजो।" अकबर ने हुक्म दिया।

"जहाँपनाह, ईरान के अमीर भी..." 'अमीर' शब्द पर ज़ोर देते हुए कल्याणमल ने तनिक हिचकिचाहट के साथ कहा।

"मैंने कहा है पहले देहाती आएँ!"

"लेकिन हुज़ूर..." अतग ने बीच में टपक कर कहा।

"पहले मेरी रैयत..." अकबर ने गरज कर कहा।

अकबर चाहता कि उसकी प्रजा बिना किसी रुकावट के सीधी उसके पास चली आये; उनकी छोटी-छोटी निरर्थक बातों और उनकी श्रद्धा-भक्ति में अकबर को अनोखा आनन्द मिलता था। अकबर की नीति थी अमीरों और उमराओं से पहले उसकी प्रजा की पुकार उसके पास पहुँचनी चाहिए; यह नीति उसके स्वभाव के अन्तर्गत थी और अनेक बार उसने अमीर-उल-उमरा भगवान दास जैसे को प्रतीक्षा करने का अवसर देकर देहाती प्रजा से साक्षात मिलने की आकांक्षा को तृप्त किया था।

देहाती जुलाहे अपने कुछ ब्राह्मण मित्रों के साथ आये और अनेक बार झुक झुक कर बादशाह के सामने वाले फ़र्श पर बैठ गये; उनके मुखिया ने एक देहाती दुशाला अकबर के क़दमों पर रखा और बादशाह ने उसे प्रेमपूर्वक अपनी गोद में उठाकर रख लिया। तब एक

जुलाहे ने अपने तीन साल के लड़के को बादशाह के क़दमों पर रखते हुए कहा—"ग़रीब परवर, इस बुढ़ापे में ख़ुदा ने इसे बख़्शा है, दुआ कीजिए कि ज़िन्दा रहे मालिक—कई दिनों से यह बीमार रहता है।"

इसी गाँव के मुखिया ने अपने एक साल के बच्चे को साल भर पहले फतहपुर सीकरी जाकर बादशाह की दुआ से बचा लिया था, इसीलिए आज बहुत श्रद्धा-भक्ति के साथ यह बूढ़ा जुलाहा आया था। 'दीन इलाही' धर्म के प्रारम्भ के बाद प्रजा में बादशाह के चमत्कार और आशीर्वाद के बारे में बहुत श्रद्धा फैल गई थी; लोग उसके फूँके हुए पानी और हाथ का आशीर्वाद पाने के लिए हज़ारों की संख्या में आते थे और बादशाह उसी प्रेम से उन्हें आशीर्वाद देता था। बंगाल से लेकर पंजाब तक बादशाह के चमत्कार को लेकर अनेक दन्त कथाएँ प्रचलित गई थीं।

बादशाह ने जुलाहे के तीन साल के बच्चे के शरीर को सहला कर आशीर्वाद दिया और उसके लिए आँखें बन्द करके मन ही मन कुछ गुनगुनाया। आशीर्वाद पाने के पाद वे ग़रीब देहाती श्रद्धा और भक्ति-पूर्वक प्रणाम करके चले गये।

अतगबेग ईरान के राजदूत और दूसरे अमीरों को लेकर हाज़िर हुआ।

"कहिए, ईरान के शाह ने क्या सौग़ात भेजी है?" अकबर ने पूछा।

राजदूत ने सलाम करके एक रंगीन चित्रों वाला ईरानी मिट्टी का घड़ा पेश करते हुए कहा—"हुज़ूरे आला, शाहे-ईरान ने यह मिट्टी का घड़ा भेजकर अर्ज़ किया है कि हिन्दुस्तानी मिट्टी का घड़ा अक़्ल से भर कर भेजने का हुक्म दिया जा जाय!"

अकबर कुछ क्षणों के लिए आँखें मूँदकर सोचने लगा। ईरान के बादशाह के मज़ाक में मानो चुनौती थी। बीरबल का साथ छोड़े बादशाह को करीब एक साल हो गया था। मालूम होता था इस

संकेत से शाहे-ईरान बताना चाहता है कि अकबर अपने आप से सचेत रहे। चारों तरफ़ विद्रोह की आग धीरे धीरे सुलग रही थी और वह इस मौक़े से फ़ायदा उठाना चाहता था।

बादशाह ने जैसे ख़ून का घूँट पीकर कहा—"सरदार, शाहे-ईरान से अर्ज़ कीजिएगा कि आज से छठे महीने हिन्दुस्तानी अक्ल आपके हुज़ूर में पेश की जाएगी!"

तब दूसरे एक सरदार ने खड़े होकर कहा—"शाहंशाह मैं समरकन्द से आ रहा हूँ—आपके हुक्म के मुताबिक वहाँ के तोपची और बाग़वान यहाँ नहीं आ सकेंगे!"

"क्या बात है सरदार; उन्हें हम मुँहमाँगे दाम देने के लिए तैयार थे?"

"हुज़ूर, अब्दुल्लाखाँ उज़बेग ने अर्ज़ किया है कि आपने जिस तरह इस्लाम को छोड़ दिया है उसी तरह हम भी आपका साथ छोड़ रहे हैं। अब ईरानी और बुख़ारी कारीगर हिन्दुस्तान नहीं जाएँगे!"

सारा दरबार ये शब्द सुनकर चौंक सा उठा। फ़ैज़ी, अबुलफ़ज़ल और राजा भगवानदास कुछ ही देर पहले आकर वहाँ बैठे थे। किन्तु तेज़ तूफ़ान में भी अकबर, हिमालय की तरह शान्त और अडिग रहने का अभ्यासी था। शान्त और गम्भीर मुस्कान के साथ अकबर ने कहा—'बहादुर सरदार, मैं तेरी बहादुरी पर खुश हूँ! लेकिन अपने बादशाह और खलीफ़ा से कह देना कि जब तक अकबर बादशाह का नाम अकबर है तब तक वहाँ इस्लामी (मुसलमान) है और जब तक अकबर हिन्दुस्तान का बादशाह है तब तक उसके सभी मज़हब है!"

"अल्लाहो अकबर!" हृदय पर हाथ रखकर शायर फ़ैज़ी बोल उठा। अकबर, और कुछ न कहकर खड़ा हो गया।

संध्या होने को थी। सूर्योपासना का समय हो गया था। परदेशी सरदार अकबर के व्यक्तित्व से इतने प्रभावित थे कि चाहते हुए

भी उन्हें उससे बात करने का साहस न होता था। उपासना के समय सबों ने विनय से मस्तक झुकाया।

ज़नानख़ाने में जाते हुए अकबर ने अपने हुजूरियों से कहा— "खेल की तैयारी करो; जाने से पहले ईरानी भी हमारा खेल देख कर जायँ !" ×

अकबर आज उदास था; उज़बेग़ की इस्लामी बात के लिए नहीं बल्कि शाहे ईरान की अक्ल के घड़े वाली बात को सुनकर ! एक साल से बीरबल उससे अलग था। बादशाह ने हर एक शहर में उसका पता लगाने के लिए जासूस भेजे थे और दूसरी भी बहुत सी तरकीबें उसने बीरबल को ढूँढ़ने के लिए आज़माईं थीं लेकिन वह हाथ न आता था। बीरबल के बिना बादशाह हास्य-विनोद भूल चुका था। सब कुछ होते हुए भी उसे जीवन सूना सूना लगता था और जैसे जैसे उसे बीरबल का पता लगाने में असफलता हाथ लगती थी वैसे वैसे उसकी बेचैनी बढ़ती जाती थी। उसके आठ रत्न थे, खेल थे, मन-मस्तिष्क को कर्त्तव्य में रत्त रहने दे इतना काम था लेकिन अकबर दुःखी था।

रावलपिंडी के समीप छावनी डालने के दो कारण थे; पहला कारण यह था कि 'युद्ध-क्षेत्र' समीप ही था जिससे कि सिपहसालारों को शीघ्रता पूर्वक आदेश दिये जा सकें। उसे अपने गुप्तचरों के द्वारा यह भी ज्ञात हुआ था कि बीरबल आसपास ही किसी देहात में है, वह मिल जाय, यह दूसरा कारण था। उसने उस क्षेत्र की सभी तहसीलों में फ़रमान भेजा था कि बीरबल जहाँ कहीं भी हों, बादशाह से मिलने चले आयें, किन्तु पंडित महेस ने मानो बादशाह से न मिलने का निश्चय कर लिया था।

× अकबर को पोलो खेलने का बहुत शौक़ था; उसने एक ऐसा गेंद तैयार करवाया था जिससे रात में भी खेला जा सके। वह अँधेरे में रत्न की तरह चमकता था।

बादशाह के लिये, बीरबल के बाद शायर फ़ैज़ी ही ऐसा था जो उन्हें सान्त्वना दे सकता था; उसने इस बीच अनेकों बार बादशाह को समझाया था—"जहाँपनाह, बीरबल, बग़ैर आपके जी नहीं सकते, उन्हें आना पड़ेगा—ज़रूर आना पड़ेगा।"

किन्तु आज 'अक्ल का घड़ा' वाली बात ने बादशाह के लिए बीरबल के वियोग का दुःख बढ़ा दिया था। बीरबल के सिवा खेल ही खेल में राजनीति के दाँव-पेचों, साम-दाम और भेद का प्रयोग करना और किसी को नहीं आता था।

उसी रात को खेल शुरू हुआ। गेंद को मैदान के बाहर से ले आने के लिए आसपास के देहातियों को बुलाकर मैदान के हर कोने में पहरे के लिए रखा गया था। कुछ गज़ के अन्तर से मशालें जल रही थीं। बादशाह घोड़े पर सवार होकर दूसरे सरदारों के साथ खेल में मशगुल था और उसके पीछे पीछे हुजूरिया अतग दौड़ रहा था। कल्याणमल अपनी थकान मिटाने के लिए मैदान के सिरे पर खड़ा हुआ किसी सरदार से बातें कर रहा था। अचानक एक गेंद पूरे वेग से उस तरफ़ आया और पास खड़े हुए एक देहाती ने पूरी ताक़त के साथ उसे वापस मैदान की तरफ़ फेंक दिया। कल्याणमल गेंद पकड़ने को ही था लेकिन उस देहाती के बीच में आ जाने पर वह फिर बातों में लग गया; बोला—"ठाकुर साहब, मैं कहता हूँ 'अक्ल का घड़ा' भगवान के सिवा कोई नहीं भेज सकता; सचमुच इसी एक सवाल से शहनशाह के दरबार की इज़्ज़त जाती दीखती है!"

"क्या फ़रमाया हुज़ूर ने?" गेंद फेंकने वाले उस देहाती ने पास आकर पूछा।

"जा जा, काम देख अपना! गँवार कहीं का!! अगर अक्ल होती तुझमें तो फिर पूछना ही क्या था। तेरे बाप और दादा भी स्वर्ग से उतर आयें तो अक्ल का घड़ा लाने की हिम्मत नहीं पड़ेगी! जा यहाँ से!"

देहाती को दुतकार कर कल्याणमल फिर ठाकुर से बातें करने लगा। अच्छा ही हुआ जो मशालों की धीमी रोशनी में उस देहाती का चेहरा नहीं देखा, नहीं तो कलेजा धक् से रह गया होता। क्योंकि वह देहाती बीरबल था !

पौ फटते समय, शाही छावनी से आधा कोस की दूरी वाले देहात के चौधरी के घर के पीछे वाले बग़ीचे में राजा बीरबल लौकी की बेल के नीचे एक मिट्टी का घड़ा गाड़ रहा था और उमा चुपचाप यह देख रही थी।

बीरबल जब मिट्टी के हाथ धो रहा था तो उमा ने पूछा—"अब तो समझाओ मुझे, क्या बात है ?"

"अक्ल का बीज बो रहा हूँ, इस मिट्टी के घड़े में !"

"क्या अक्ल बिलकुल ख़तम हो गई है ?"

"हाँ; ईरान में ! तुम्हें पन्द्रह दिनों तक इस जगह पहरा देना होगा !"

"लेकिन पन्द्रह दिनों में तो घड़े में रक्खी हुई लौकी बाहर निकल आयेगी....ओह, समझ गई ! लेकिन यहाँ से ईरान को अक़्ल भेजेगा कौन ? शाहंशाह अकबर ?"

"धीरे बोलो ज़रा—" बीरबल ने उमा के मुँह पर हाथ रखते हुए कहा।

ये दोनों एक महीने से इस गाँव में यात्री बन कर ठहरे हुए थे, चौधरी के यहाँ। चौधरी ने पढ़ा लिखा ब्राह्मण समझकर आग्रहपूर्वक इन्हें रोक रक्खा था।

"मैं कहती हूँ कबतक इस तरह छुपे छुपे दिन काटेंगे हम ?" उमा ने बीरबल का हाथ मुँह पर से हटाते हुए कहा—"जब प्रयाग में थे तो जासूस लगे हुए थे पीछे; काल्पी में पहेलियों वाला ढिंढोरा पिट-

वाया गया और यहाँ भी बादशाह ने पहले से ही तुम्हारे लिए जाल बिछा रखा है !"

"अरी, यह जाल नहीं, मुसीबत है मुसीबत !"

"तो फिर जाते क्यों नहीं तुम उनके पास ? अभी अभी जो फरमान उन्होंने निकाला है उसमें तो तुमसे मिलने की इच्छा दिखाई है बादशाह ने !"

"इसीलिए तो तुझसे कह रहा हूँ, सोच-समझ कर बोल ! अगर यहाँ किसी को मालूम हो गया कि मैं ही बीरबल हूँ तो अभी तक ख़बर न पहुँचाने के अपराध में बेचारा यह ग़रीब चौधरी मुफ़्त में मारा जाएगा।"

"राजा, कबतक तुम उनसे छुप कर रह सकोगे ? तुम्हारा मन उनसे मिलने के लिए तरस रहा है और उनका मन तुमसे मिलने के लिए तड़प रहा है। उनके ढिंढोरों में यह बात साफ़ दिखाई देती है—अब मान जाओ !"

"तो यूँ क्यों नहीं कहतीं रानी, कि जहाँपनाह ने जो तुम्हारे दो लड़कों को शाही ज़नान ख़ाने में अपने पास रखा है उनसे मिलने के लिए तुम्हारा मन छटपटा रहा है !"

"मैं माँ हूँ न !"

"और मैं भी बाप हूँ !"

"यही तो मुसीबत है, अगर माँ होते तो जानते !" अपने स्वभावानुसार चिढ़कर उमा ने कहा।

"मैं भी तो यही कहता हूँ कि बाप होतीं तो मालूम हो जाता !" रोज़ की तरह बीरबल ने विनोद को अपनाया।

"राजा, मैं पूछती हूँ, क्या हर बात हम इसी तरह हँसी में उड़ा दिया करेंगे !"

"रानी, जीवन भर हम दोनों ऐसे ही रहेंगे—हमारा हृदय भी !"

"अब बहुत हो चुका, हमेशा तुम मेरी बात को हँसी में उड़ा दिया करते हो—यह तो बादशाह पर अत्याचार है तुम्हारा, मिल लो उनसे जाकर !"

हर बात को विनोद का विषय बना देने वाले राजा बीरबल की आँखों की गहराई में दुःख था यह बात उसकी उमा अच्छी तरह जानती थी। उमा की हर बात करुणा और सत्य से ओत प्रोत होती थी।

रानी को अपनी ओर खींच कर बीरबल ने उसकी करुणामयी आँखों में देखा; उससे प्रेम के सिवा कुछ भी न चाहने वाली उस नारी से वह क्या कहे ? बीरबल के प्राणों के आधार दो ही प्राणी थे—उमा और बादशाह। परन्तु प्रेम की उन्मत्त अवस्था में भी राजा अपने आप को वश में रखना जानता था और उमा हर बार यही बात प्रेम के प्रवाह में बहकर भूल जाया करती थी।

रानी की ठोढ़ी उठाकर बीरबल बोला—"रानी बादशाह को केवल मित्रता के लिए नहीं, अपनी बादशाहत के लिए भी जीना है ! मेरी मित्रता के लिए उन्होंने बहुत से बलिदान किये हैं, बहुत दुःख उठाया है; उनका यह भार कम होते ही मैं उनके चरणों में गिर जाऊँगा !"

उमा, बीरबल को निर्निमेष नयनों से देखती रही, पति का सही महत्त्व आज उसने आँक लिया था। आँसू भरी आँखों से झुक कर उसने बीरबल के पैर पकड़ लिए।

इस बात के बाद एक मास व्यतीत हो चुका था। 'अक्ल का घड़ा' भर चुका था और उसे किसी उपाय से बादशाह के पास भेज कर यहाँ से चले जाने का विचार दोनों कर रहे थे कि यकायक गाँव का चौधरी उनके पास दौड़ता हुआ आया—

"पंडितजी, मैं ग़रीब हूँ, मेरा बाप ग़रीब था—सात पीढ़ियों से हम ग़रीब हैं ! मैं कहने भर का चौधरी हूँ—मैं जो पूछूँ उसका जवाब

दीजिएगा और मेरी सात सात पीढ़ियाँ आपके नाम को याद करती रहेंगी!"

"पर मुझे बताओ तो, यह गड़बड़ी किस बात की है?"

"पंडित कालीचरण जी!" चौधरी को बीरबल ने अपना यही नाम बताया था "यह सब मैं आपको फिर बताऊँगा, पहले आप मेरी बातों का जवाब देते जाइये—बताइये, ऐसी क्या चीज़ है जो सबके बाद आती है और सबसे पहले चली जाती है?"

"दाँत!"

"वाह वाह!" चौधरी उठकर बोला—बताइये, ऐसी भी चीज़ है जो बहुत पास फिर भी बहुत दूर है?"

"आँखें!"

"शाबाश मेरे पंडित, लाखों बरस जियेंगे आप—अब बताइये, मूर्ख कौन है?"

"जो अपने स्वार्थ को न समझता हो!"

"अरे क्या कहूँ पंडितजी आपको—अब बताइये, उजाले में क्या नहीं दिखाई देता?"

"अँधेरा!"

"वाह रे मेरे प्यारे पंडित! मान गया, हार गया, जीत गया! ....अब कृपा करके एक बात का जवाब और दे दीजिए—बस एक!" चौधरी आनन्द की चरमसीमा पर आ पहुँचा था—"पंडितजी, अब मैं आपको पूरी बात समझाता हूँ। बात यह है पंडितजी कि हम कंगाल हैं; न काम है, न कुछ पैदावार है। आज ही अकबर बादशाह का शाही फ़रमान निकला है कि अगर कोई न धूप में, न छाया में रहकर मेरे पास आयेगा तो मैं उसे पाँच हज़ार रुपये इनाम दूँगा। आपसे मैंने जिन बातों का जवाब पूछा था वे बातें मुझे यहाँ के पंडित ने बताई थीं और कहा था कि जो आदमी इन बातों का जवाब देगा वह दुनिया की

बड़ी से बड़ी बात का सही रास्ता दिखा सकता है। आपके सभी जवाब सही हैं। धन्य हो पंडित, भगवान ने इस ग़रीब ही के लिए आपको यहाँ भेजा है। मेरे बच्चे आप ही के बच्चे हैं—उन्हीं पर दया करके मुझे सही रास्ता दिखा दीजिए, 'धूप में भी नहीं, छाँव में भी नहीं' कैसे जाया जाय ! मुझे पाँच हज़ार मिलेंगे तो मैं जीवन भर..."

"अच्छा, अच्छा चौधरीजी पहले साफ़-सुथरे कपड़े पहन कर आइये, फिर बताता हूँ !"

एक ही साँस में अनगिनत बातें पूछ लेने वाला चौधरी पालतू कुत्ते की तरह दौड़कर अपने घर में चला गया—अपनी धर्मपत्नी की सातों पीढ़ियों की ख़बर ली और अपने सुपुत्रों को गधा बनाने के बाद चौधरी उल्टे-सीधे कपड़े पहन कर बीरबल के सामने आ खड़ा हुआ। सिर पर पत्नी की चुँदरी बाँधे हुए चौधरी निःसन्देह 'न धूप में, न छाया में' जाने के योग्य था।

बीरबल ने उसे मार्ग दिखाना प्रारम्भ किया; चौधरी आँखें बन्द करके सुनने लगा।

●

(२३)

राजा भगवानदास काश्मीर की ओर गये थे और इस समय अकबर के नौ रत्नों में से दो ही रत्न उसके पास थे—अबुलफ़ज़ल और फ़ैज़ी।

शाही शामियाना में अकबर के आकर बैठते ही शाहज़ादा सलीम बीरबल के दोनों पुत्रों—हरिहर और लाला–को लेकर उपस्थित हुआ। बादशाह ने स्नेह-पूर्वक दोनों को देखा--मानो छोटे छोटे दो बीरबल हों !

बादशाह ने हरिहर से पूछा—"बेटा, तेरे पिता जी तो कवि हैं ही, तू नहीं करता कविता ?"

"थोड़ी-बहुत करता हूँ हुज़ूर !"

"थोड़ी-बहुत का मतलब ?"

"जहाँपनाह, जो लोग हमसे ज़्यादा जानते है उनसे थोड़ी और जो हमसे कम जानते हैं उनसे बहुत (ज़्यादा) !"

"शाबाश ! जीते रहो ।"

इतने में यकायक कल्याणमल दौड़ता हुआ आया और हाँफते हुए बोला—"हुज़ूर, न धूप न छाँव में' वाला एक पास के देहात का चौधरी बाहर आकर खड़ा है !"

"क्या कहा ?" अकबर ने तनिक आश्चर्य से पूछा; फिर कौतूहल पूर्वक बोला—"चलो देखें।"

बाहर आकर बादशाह ने अवाक् होकर देखा कि एक चौधरी उसके सामने हाथ बाँधे खड़ा था; उसके सिर पर एक खटिया रखी हुई थी और देहातियों का एक बड़ा-सा झुण्ड उसके पीछे चला आ रहा था। चौधरी का सारा अस्तित्व पसीने से लथपथ था।

बादशाह को देखते ही उसकी जीभ जैसे ग़ायब हो गई; काफ़ी प्रयत्न करने के बाद उसके मुँह से दो चार शब्द निकल सके—"जहाँ-पनाह...मैं...मैंने...हमने...न धूप में न छाँव में—इनाम..." उससे और अधिक न बोला गया।

बादशाह ने झुककर पास ही खड़े हुए फ़ैज़ी के कान में कहा—"शेख़जी, राजाजी हमें मिल गये; शायर को लेने के लिए शायर को ही जाना पड़ेगा; जाओ ले आओ।"

फ़ैज़ी ख़ुशी ख़ुशी सलाम करके चौधरी के पास आ खड़ा हुआ। फ़ैज़ी को अपने पास खड़ा देखकर चौधरी की हिम्मत बढ़ गई। उसने रौब से पूछा—"सरदार, मैं पूछता हूँ कहाँ हैं मेरे पाँच हज़ार ? मैं न

धूप में न छाँव में आया हूँ—बताइये, सरदार साहब मैं रुपये किससे लूँ ?"

फ़ैज़ी ने उसका कन्धा पकड़ कर कहा—"पहले तू मुझे अपने घर ले जा, पचास रुपये ज़्यादा दूँगा।"

"जुग जुग जियो सरदार साहब...." चौधरी उसी तरह सिर पर खटिया रखे आगे आगे दौड़ने लगा।

"खटिया रहेगी मेरे सिर पर हुज़ूर ! पचास रुपये पाँच हज़ार के साथ ही मिलेंगे न ? अच्छा, अच्छा !"

चौधरी के पैरों में दुगुनी शक्ति आ गई थी; फ़ैज़ी को भी उसके पीछे पीछे दौड़ना पड़ा।

× × × ×

मृत शरीर में प्राण आ जाएँ उसी तरह आज शाही शामियाना जीवन-स्फूर्ति के साथ जगमगा रहा था। चन्दन और धूप की सुगन्ध से वातावरण महक रहा था। अबुलफ़ज़ल और फ़ैज़ी बादशाह के पीछे खड़े थे और राजा बीरबल उसके चरणों में झुका हुआ था। बादशाह के दो बार प्रयत्न करने पर भी बीरबल ने चरण न छोड़े; अन्त में बादशाह खड़ा हुआ और खींच कर बीरबल को हृदय से लगा लिया। शायर फ़ैज़ी इस करुण दृश्य में स्थिर न रह सका; उसके मुँह से निकल ही गया—"अल्लाहो अकबर !"

बादशाह, बीरबल को एकटक देखता रहा; कुछ क्षणों तक दोनों में से कोई कुछ न बोल सका। अन्त में बादशाह ने बीरबल को खींच कर तख़्त पर बिठाते हुए पूछा—" पधारिये राजाजी, कहिए, क्या भेंट लाये हैं ?"

भावावेश में होते हुए बीरबल ऊपर से शान्त दिखाई दे रहा था। बादशाह का प्रश्न सुनकर वह शामियाने के बाहर रखा हुआ घड़ा ले आया और बादशाह के चरणों पर रखते हुए बोला—"शाहंशाह अक्ल

से भरकर यह घड़ा लाया हूँ, जिसे इसकी कमी है उसे भेज देने का हुक्म दिया जाय !''

बादशाह कुछ बोल न सका। इतनी बड़ी उलझन को सुलझाने वाले मित्र की प्रशंसा भी कैसे की जाय? आर्द्र स्वर को दबाकर बादशाह ने कहा—"वज़ीरे-आज़म, आज ही यह घड़ा शाहे-ईरान के नाम रवाना कर दिया जाय!"

"और साथ ही अर्ज़ की जाय कि इस घड़े को तोड़े बग़ैर अक्ल निकाली जाय और घड़ा वापस हिंदुस्तान भेज दिया जाय वर्ना शाहे-ईरान को बहुत बड़े ख़र्च में उतरना पड़ेगा—हिंदुस्तान की मिट्टी बहुत महँगी होती है।" बीरबल ने बादशाह के वाक्य की पूर्ति कर दी।

इस बार भी बादशाह कुछ न कह सका, क्योंकि जो कुछ कहना था वह कहा जा चुका था—एक अनोखे ढंग से।

"आलम पनाह! अल्ला हो अकबर!!" एक आदमी चीख़ता हुआ शाही शामियाने में दौड़ता हुआ बादशाह के सामने आ खड़ा हुआ; अन्दर आने की मुमानियत के बावजूद उसने उसकी पर्वाह नहीं की। उसके शरीर पर अनगिनत घाव थे, एक हाथ टूट चुका था और एक आँख फूट चुकी थी। वह था सैयद अब्दुल्ला!

बादशाह को झुककर सलाम करने से पहले उसका सारा शरीर झुक गया और वह लड़खड़ाता हुआ बादशाह के चरणों में गिर गया। बादशाह ने उसे अपने हाथों से उठाया—अहोभाग्य! मरते मरते तक भी वह हिन्दुस्तान के बादशाह के हाथों में वह आ चुका था। सैयद को अपनी अन्तिम घड़ियाँ सफल होती दिखाई दीं। उसके पुरखों की क़ुर्बानी से रँगी हुई तलवार के बल पर मुग़ल बादशाहत की नींव डली थी। उसके डूबते हुए जीवन में एक नया बल आया और उसके चेहरे की मुस्कान हर्षाश्रुओं से धुलकर निर्मल हो गई।

"क्या बात है अब्दुल्ला?"

सैकड़ों सरदारों में से एक को बादशाह ने पुकारा। बादशाह की स्मरण शक्ति अद्भुत थी। अब्दुल्ला इस दुःख में भी हर्ष से गद्गद हो गया—क्या उस जैसे साधारण सरदार का नाम बादशाह के हृदय में अंकित था? विशाल हृदय बादशाह के लिए अपना बलिदान करके अब्दुल्ला ने अपने को धन्य भाग्य समझा! अपनी समस्त शक्ति एकत्रित करके उसने बोलना शुरू किया—"दीनदुनिया के मालिक! क़िब्ल-ओ-काबा!! आज से तीसरे दिन, यूसुफ़खाँ तीस हज़ार यूसुफ़-जाई पठानों के साथ, पीर-रोशनाई का झण्डा लेकर इस्लाम को बचाने और आपको अचानक गिरफ़्तार करने आयेगा। वह कहता है कि आप इस्लाम के दुश्मन हैं इसलिए वह आपको ज़िन्दा पकड़ कर..." उसका गला भर आया; बादशाह ने उसे और समीप खींचा। उसने फिर बोलना शुरू किया—"इस वक्त आपके पास थोड़ी-सी फ़ौज समझ कर रात को जब आप गेंद का खेल (पोलो) खेलते हैं, उस वक्त हमला करके आपको ज़िन्दा...मैं यूसुफ़ का दोस्त था...."

"अब तुम बादशाह के दोस्त हो; तुम कभी बेवफा नहीं हो सकते....तो यूसुफ़ मुझे ज़िन्दा पकड़ कर मार डालना चाहता है?"

"उसे मुझ पर शक हुआ; जब मैं यहाँ छिपकर आ रहा था उसने मुझ पर वार किया लेकिन खुदा ने मुझे बचा लिया—मेरा क़ुसूर माफ़ हो!"

अब्दुल्ला, बादशाह के हाथ से छूटकर खुदा के दरबार में चला गया था।

फ़ौलादी हाथों से बादशाह ने अब्दुल्ला को उठाकर खड़ा किया ही था कि उसका दाहिना हाथ अलग जा गिरा; रणक्षेत्र में लाखों मनुष्यों को मरते देखने वाले अकबर के तीनों रत्न काँप उठे!

अकबर के दाँत और जबड़े कठोरता से भिंच गये; उसकी दृष्टि मृत अब्दुल्ला के चेहरे पर जमी हुई थी; ओठों की अपेक्षा उसके गले पर फूली फूली नसें उसके तीव्र क्रोध को प्रकट कर रही थीं!

"बुज़ुर्गे-सल्तनत !" अकबर ने अबुल फ़ज़्ल की ओर देखे बग़ैर पुकारा—"अकबर की सल्तनत में मज़हब के बहाने यह पहली बग़ावत है। जब तक अकबर ज़िन्दा है, वह अपने राज्य में ऐसे लोगों को ज़िन्दा नहीं रहने देगा। मैं अपने हाथों से उनकी ख़बर लूँगा—लश्कर तैयार किया जाय !"

अतगबेग और कल्याणमल की कोशिशों के बावजूद भी बादशाह ने अब्दुल्ला की लाश को नीचे न गिरने दिया; उसके हृदय में ज्वाला-मुखी भड़क उठा था—"शायर, आप आगरा की तरफ़ जाइये; वज़ीर जी, आप और राजाजी यहीं रहें ! जैनख़ाँ, कोका और हकीम फ़तहख़ाँ को जल्द से जल्द यूसुफ़जाइयों की तरफ़ रवाना किया जाय; मैं उनसे वहीं मिलूँगा—देखूँगा उन इस्लाम के पाक नाम को बदनाम करने वालों को ! मैं उन्हें शिकस्त दूँगा, शह दूँगा ! मुझे इस क़ुर्बानी की क़सम ! जो मैं उन्हें सख़्त सज़ा न दूँ—फ़ौरन फौज तैयार की जाय !"

बादशाह ने अब्दुल्ला की लाश को कल्याणमल के हाथों में सौंपा; जब अतग ने अब्दुल्ला का कटा हुआ हाथ उठाया तो सब फिर काँप उठे !

अब तक तीनों रत्न चुपचाप बादशाह के हुक्मों को सुन रहे थे, लेकिन अब बादशाह को बैठा देखकर वज़ीरे-आज़म अबुल फ़ज़ल बोला—"हुज़ूर, आपका यहाँ रहना ज़्यादा मुनासिब है; इस हालत में मुल्तान, कश्मीर, काबुल, बंगाल और दक्खन की तरफ़ यहीं से नज़र रखी जा सकती है। अगर यहीं कमज़ोरी आ जाएगी तो सबों को नुकसान उठाना पड़ेगा। आप यहीं रहिये; राजा जी आपके साथ रह कर मेरा और टोडरमलजी का काम सम्हालेंगे। शेख़जी को दिल्ली रवाना किया जाय ताकि वे वहाँ जाकर ज़्यादा फौज का इन्तज़ाम कर सकें और हुज़ूर मुझे यूसुफ़जाइयों का सामना करने का हुक्म दिया जाय !"

बादशाह चुपचाप वज़ीरे-आज़म की बात सुन रहा था; उसकी शान्त वाणी के पीछे उसका दृढ़ निश्चय झलक रहा था। अगर ऐसी दो बग़ावतें और हों तो सल्तनत का नामो-निशान मिट जाय !

"जहाँपनाह !" बादशाह के जवाब देने के पहले ही बीरबल ने कहना शुरू किया; बादशाह ने अबतक चुपचाप बैठे हुए बीरबल की ओर देखा। उसके चेहरे पर एक अद्‌भुत आभा दिखाई दे रही थी—"वज़ीरे-आज़म बिलकुल सच कह रहे हैं; आपका यहीं रहना मुनासिब है नहीं तो इस मुसीबत के वक्त में सबों की मुसीबत और बढ़ जाएगी। और जहाँ बादशाह रहें वहाँ वज़ीरे-आज़म भी रहेंगे। यूसुफ़ख़ाँ से लड़ने मैं जाऊँगा !"

"राजाजी !" अकबर यकायक चौंक कर खड़ा हो गया।

"हुज़ूर, मेरी अर्ज़ टालिये नहीं—पहले मेरा हक़ है !" राजाजी ने बादशाह को आगे बोलने न दिया।

"राजाजी, यह क्या कह रहे हैं आप ? साम, दाम और भेद से पहले आज दण्ड को काम में लाने की बात कर रहे हैं ?"

"हुज़ूर, दण्ड देना मुझे नहीं आता था, वह तो आपने ही सिखाया है—रणसंग्राम में मुझे अपने साथ ले जाकर। अब उसके आज़माने का वक्त आया है—हुक्म दीजिए मुझे !"

"राजाजी, मैं जानता हूँ कि सिपहसालार के तौर पर आप किसी से कम नहीं हैं इसलिए ज़रूर कामयाब होंगे लेकिन साम, दाम और भेद का रसिया आज ज़िन्दगी में पहली बार तलवार उठाना चाहता है, यही बात मैं बार बार सोच रहा हूँ !"

"आलीजाह, जहाँ अक्ल काम नहीं करती वहाँ तलवार का ही आसरा लेना पड़ता है। यूसुफ़ख़ाँ और यूसुफ़जाई लोग साम, दाम और भेद से नहीं मानेंगे, उनको समझाने के लिए तलवार ही चाहिए; मुझे जल्द से जल्द हुक्म दिया जाय !"

"नहीं हुज़ूर, यह ज़्यादती है; राजाजी कमज़ोर हैं, पहाड़ की ऊँची-नीची मंज़िलें इनके लिए रुकावट पैदा करेंगी। मुझे हुक्म दिया जाय !"

"जहाँपनाह, यूसुफ़ की दुश्मनी मुझ से है; मेरे ही कारण उसने

"बुज़ुर्गे-सल्तनत !" अकबर ने अबुल फ़ज़्ल की ओर देखे बग़ैर पुकारा—"अकबर की सल्तनत में मज़हब के बहाने यह पहली बग़ावत है। जब तक अकबर ज़िन्दा है, वह अपने राज्य में ऐसे लोगों को ज़िन्दा नहीं रहने देगा। मैं अपने हाथों से उनकी ख़बर लूँगा—लश्कर तैयार किया जाय !"

अतगबेग और कल्याणमल की कोशिशों के बावजूद भी बादशाह ने अब्दुल्ला की लाश को नीचे न गिरने दिया; उसके हृदय में ज्वाला-मुखी भड़क उठा था—"शायर, आप आगरा की तरफ़ जाइये; वज़ीर जी, आप और राजाजी यहीं रहें ! जैनख़ाँ, कोका और हकीम फ़तहख़ाँ को जल्द से जल्द यूसुफ़जाइयों की तरफ़ रवाना किया जाय; मैं उनसे वहीं मिलूँगा—देखूँगा उन इस्लाम के पाक नाम को बदनाम करने वालों को ! मैं उन्हें शिकस्त दूँगा, शह दूँगा ! मुझे इस क़ुर्बानी की क़सम ! जो मैं उन्हें सख़्त सज़ा न दूँ—फ़ौरन फौज तैयार की जाय !"

बादशाह ने अब्दुल्ला की लाश को कल्याणमल के हाथों में सौंपा; जब अतग ने अब्दुल्ला का कटा हुआ हाथ उठाया तो सब फिर काँप उठे !

अब तक तीनों रत्न चुपचाप बादशाह के हुक्मों को सुन रहे थे, लेकिन अब बादशाह को बैठा देखकर वज़ीरे-आज़म अबुल फ़ज़ल बोला—"हुज़ूर, आपका यहाँ रहना ज़्यादा मुनासिब है; इस हालत में मुलतान, कश्मीर, काबुल, बंगाल और दक्खन की तरफ़ यहीं से नज़र रखी जा सकती है। अगर यहीं कमज़ोरी आ जाएगी तो सबों को नुकसान उठाना पड़ेगा। आप यहीं रहिये; राजा जी आपके साथ रह कर मेरा और टोडरमलजी का काम सम्हालेंगे। शेख़जी को दिल्ली रवाना किया जाय ताकि वे वहाँ जाकर ज़्यादा फौज का इन्तज़ाम कर सकें और हुज़ूर मुझे यूसुफ़जाइयों का सामना करने का हुक्म दिया जाय !"

बादशाह चुपचाप वज़ीरे-आज़म की बात सुन रहा था; उसकी शान्त वाणी के पीछे उसका दृढ़ निश्चय झलक रहा था। अगर ऐसी दो बग़ावतें और हों तो सल्तनत का नामो-निशान मिट जाय !

"जहाँपनाह !" बादशाह के जवाब देने के पहले ही बीरबल ने कहना शुरू किया; बादशाह ने अबतक चुपचाप बैठे हुए बीरबल की ओर देखा। उसके चेहरे पर एक अद्भुत आभा दिखाई दे रही थी—"वज़ीरे-आज़म बिलकुल सच कह रहे हैं; आपका यहीं रहना मुनासिब है नहीं तो इस मुसीबत के वक्त में सबों की मुसीबत और बढ़ जाएगी। और जहाँ बादशाह रहें वहाँ वज़ीरे-आज़म भी रहेंगे। यूसुफ़ख़ाँ से लड़ने मैं जाऊँगा !"

"राजाजी !" अकबर यकायक चौंक कर खड़ा हो गया।

"हुज़ूर, मेरी अर्ज़ टालिये नहीं—पहले मेरा हक़ है !" राजाजी ने बादशाह को आगे बोलने न दिया।

"राजाजी, यह क्या कह रहे हैं आप ? साम, दाम और भेद से पहले आज दण्ड को काम में लाने की बात कर रहे हैं ?"

"हुज़ूर, दण्ड देना मुझे नहीं आता था, वह तो आपने ही सिखाया है—रणसंग्राम में मुझे अपने साथ ले जाकर। अब उसके आज़माने का वक्त आया है—हुक्म दीजिए मुझे !"

"राजाजी, मैं जानता हूँ कि सिपहसालार के तौर पर आप किसी से कम नहीं हैं इसलिए ज़रूर कामयाब होंगे लेकिन साम, दाम और भेद का रसिया आज ज़िन्दगी में पहली बार तलवार उठाना चाहता है, यही बात मैं बार बार सोच रहा हूँ !"

"आलीजाह, जहाँ अक्ल काम नहीं करती वहाँ तलवार का ही आसरा लेना पड़ता है। यूसुफ़ख़ाँ और यूसुफ़ज़ाई लोग साम, दाम और भेद से नहीं मानेंगे, उनको समझाने के लिए तलवार ही चाहिए; मुझे जल्द से जल्द हुक्म दिया जाय !"

"नहीं हुज़ूर, यह ज़्यादती है; राजाजी कमज़ोर हैं, पहाड़ की ऊँची-नीची मंज़िलें इनके लिए रुकावट पैदा करेंगी। मुझे हुक्म दिया जाय !"

"जहाँपनाह, यूसुफ़ की दुश्मनी मुझ से है; मेरे ही कारण उसने

यह सब किया है। उसके सामने जाने का पहला हक़ मुझे है—मेहरबानी हो!"

"नहीं हुज़ूर!" जोश में आकर वज़ीरे-आज़म बोल उठे!

"नहीं हुज़ूर, वज़ीरे-आज़म नहीं, मैं जाऊँगा!" बीरबल अधिक दृढ़ता से बोला।

"मालूम होता है कि दोनों की रस्साकशी में तुम ख़ुद बादशाह को भूल जाते हो!" बादशाह ने कहा।

"और शेख़जी को भी भूल रहे हो!" फ़ैज़ी ने कहा।

"नहीं जहाँपनाह," बीरबल ने कोमल स्वर में दृढ़ता के साथ कहा—"रथ के घोड़े दौड़ते हैं और सारथी उन्हें दौड़ाता है। कहाँ जाना है यह घोड़े नहीं, सारथी जानता है। आप राज्य के सारथी और हम लोग घोड़े हैं; आपका काम है हम लोगों की लगाम पकड़े रहना। हुज़ूर आपको यहीं रहना पड़ेगा और आपके साथ वज़ीरे-आज़म का रहना भी ज़रूरी है। मेरी अर्ज़ मंज़ूर करके मुझे ही जाने का हुक्म दिया जाय!"

"बिलकुल नहीं हुज़ूर!" वज़ीरे-आज़म का भी जोश बढ़ता जा रहा था—"आपको मुझसे ज़्यादा ज़रूरत राजाजी को है—मेरा और टोडरमल जी का काम सम्हालना राजाजी के लिए बायें हाथ का खेल है। इस नाचीज़ को ही कूच करने का हुक्म दिया जाय!"

"नहीं जहाँपनाह, मैं ही जाऊँगा!" बीरबल ने मानो वज़ीरे-आज़म की आवाज़ को दबाते हुए कहा।

"नहीं आलमपनाह, जाऊँगा तो मैं ही!" वज़ीरे-आज़म ने भी ज़िद कर ली थी।

"दो हाथों में से किसको काटूँ?" बादशाह को इस मौक़े पर भी हँसी आ गई थी।

अब तक बीरबल और अबुल-फ़ज़ल दोनों बादशाह की दाहिनी तरफ़ खड़े थे; बीरबल तुरन्त लपककर बाईं ओर आ गया और बोला —"बायाँ हाथ काटा जाय हुज़ूर, दायाँ ज़्यादा ज़रूरी है, पाक है!"

इस धर्म-संकट में भी बादशाह को खिलखिला कर हँसना पड़ा। बड़े बड़े महारथी मामूली सिपाहियों की तरह लड़ें यह भी अच्छी बात न थी। फ़ैज़ी ने तब दो अलग अलग चिट्ठियाँ डालने की सलाह दी। बादशाह ने तब चिट्ठियाँ डालने का हुक्म दिया। जिसका नाम आ जाय, उसी को कूच करने का हुक्म दिया जाय!

शायर फ़ैज़ी को ही चिट्ठियाँ उठाने का हुक्म दिया गया; बीरबल और अबुलफ़ज़ल साँसें भरकर देखने लगे।

"मुबारिक हो राजा जी! फ़तह हो!!" शायर ने चिट्ठी को पढ़कर कहा।

वज़ीरे-आज़म अबुल-फ़ज़ल ने स्नेहमयी ईर्ष्या से राजाजी को देखा; वह एक विचित्र भावना थी।

बीरबल घुटनों के बल बादशाह के सामने बैठ गया, बादशाह ने अपनी तलवार राजाजी को भेंट की।

"कल सबेरे कूच कीजिए, ख़ुदा आपको कामयाब करे!" बादशाह ने धीमे स्वर से कहा।

"अल्लाहो अकबर!" वजीरे-आजम ने कहा।

"जल जलालुह!" सब एक साथ बोल पड़े!

बादशाह आँखें बन्द किये स्थिर खड़ा था; मन ही मन वह बीरबल के लिए शुभकामना में लीन था। दीन-इलाही का प्रवर्तक, दीन-इलाही के अनुयायी को आशीर्वाद दे रहा था। ×

"अल्लाहो अकबर—जलजलालुह!"

"—ईश्वर महान है, वह ज्योतिपुञ्ज है!!"

× अकबर: बादशाह के चलाये हुए दीन-इलाही पंथ को बहुत से सरदारों ने बादशाह को प्रसन्न करने के लिए स्वीकार किया था। शेख़ अ बुल फ़ज़ल और फ़ैज़ी उसके कट्टर अनुयायी थे; केवल राजा बीरबल ही उसके हिन्दू अनुयायी थे।

सोलह श्रृंगारों से सुसज्जित होकर उमा ने बीरबल के ललाट पर अक्षत कुंकू लगाया, आरती की और शहनशाह की दी हुई तलवार उसकी कमर में बाँधकर वह उसके चरणों में गिर गई। अब तक बीरबल चुपचाप उमा को देख रहा था—सोच रहा था कि वैसे तो वह अनेकों बार युद्धक्षेत्र में गया है लेकिन आज का यह प्रयाण उन सबों से विशिष्ट है क्योंकि जीवनभर समझौते और संधि-प्रयासों में सफल होने वाले बीरबल ने आज तलवार उठाई है !...वह देख रहा था कि उसकी प्रौढ़ ब्राह्मणी उमा आज एक अवर्णनीय भाव आँखों में भरकर उसे मुस्कराते हुए बिदा दे रही है।

अत्यन्त स्नेहपूर्वक बीरबल ने उमा को अपने दोनों हाथों से उठाया; अपलक नेत्रों से वह अपनी अभिन्न जीवन-संगिनी को देखता रहा। यकायक उसे विनोद सूझ आया—

"रानी, सच कह रहा हूँ, आज तुम ब्याहने के लिए निकली हुई षोड़षी कन्या दिखाई दे रही हो !"

"और आप आज घोड़े पर चढ़ने के लिए तैयार दूल्हा जैसे दिखाई दे रहे हैं..." कहते कहते उमा का स्वर भारी हो आया। बीरबल ने देखा कि उसकी उमा बड़ी कठिनाई से आँसू आँखों में रोक पा रही है।

बीरबल ने अति कोमल स्वर से कहा—"रानी, जीवन का उद्देश्य जीना है, परन्तु यह काया नहीं, कीर्ति अमर है; मैं उसी कीर्ति के लिए जा रह हूँ !"

"सिधारो राजा, विजयी हो ! वही एक ऐसी वस्तु है जो पुरुष का साथ कभी नहीं छोड़ती, इस लोक में और परलोक में !"

बीरबल और अधिक कुछ न बोल सका। गद्गद् होकर उसने उमा को अपने वक्षस्थल से लगा लिया; दो क्षणों तक छाती से लगाये

रखकर यकायक वह उमा को छोड़कर कक्ष से बाहर हो गया। उमा ने आँसू पोंछ लिए और प्रसन्नवदना होकर बीरबल के पीछे पीछे चली गई।

"वाह बेटा! आज जो तेरी चाची होती—" यह पुराणी चाचा का स्वर था; चरणरज लेते हुए बीरबल को उसने उठाकर छाती से लगा लिया। वृद्धत्व और भावावेश की अधिकता से उसका सारा शरीर काँप रहा था—"बेटा, ब्राह्मण तलवार को नहीं छूता, परन्तु जब वह हथियार उठाता है तो परशुराम बन जाता है। विजयी हो! अमरकीर्ति का अधिकारी हो!!"

बीरबल ने आशीर्वाद लेकर एक ओर खड़े हुए अपने दोनों पुत्र और पुत्री को देखा; उसके देखते ही वे उससे लिपट गए। भीतर के कक्ष में उमा पुष्पों की थाली लेकर खड़ी थी। ठीक एक वर्ष के बाद सारा कुटुम्ब एकत्रित हुआ था किंतु दो ही दिनों में फिर बिछुड़ने का अवसर आ गया था। बीरबल की पुत्री ने तब अपनी माँ के पास से फूलों का हार लेकर पिता को पहनाया। बाहर कई सरदार उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। बीरबल उधर जा ही रहा था कि पुराणी चाचा बोल उठा—"महाबली अकबर की जै हो!"

बीरबल ने घूम कर देखा कि शाहनशाह अकबर उसके आँगन में पैदल आकर खड़ा है। कुछ क्षणों के जय जयकार के बाद वहाँ शान्ति छा गई। बादशाह ने कल्याणमल के हाँथ से सुरभित फूलों का हार लेकर आगे झुके हुए बीरबल के गले में पहना दिया और अपने हाथों से अपनी कटार निकाल कर उसकी कमर में बाँध दी। हिन्दुस्तान के शाहनशाह ने आज तक ऐसा सम्मान किसी व्यक्ति का नहीं किया था।

"राजाजी!" बादशाह ने गंभीर स्वर से कहा—"मेरी इस कटार ने हमेशा मेरी इज्ज़त बचाई है!"

"बड़ी कृपा हुई कृपानिधान—हमारे अहो भाग्य कि आपके पवित्र चरण आज हमारे आँगन में...."

वाक्य पूरा होने से पहले ही जय जयकार से फिर एक बार सारा भवन गूँज उठा। बादशाह ने बीरबल को हृदय से लगाया। बादशाह का ईरानी घोड़ा बाहर सज-धज कर तैयार ही खड़ा था। सबों की ओर एक बार देख कर बीरबल घोड़े पर सवार हो गया।

राजा बीरबल और अकबर बादशाह उस विशाल सेना के जय जयकार के बीच आगे आगे चले जा रहे थे।

आँखों में आँसू भरकर उमा अपने योद्धा पति की धुँधली-धुँधली आकृति को तब तक देखती रहीं जब तक कि वह आँखों से ओझल नहीं हो गया; उसे इतना भी ध्यान न रहा कि उसके वृद्ध श्वसुर और तीनों बच्चे उसे घेर कर खड़े थे।

राजाजी और बादशाह बहुत समय के बाद साथ साथ जा रहे थे। बादशाह उसे फौजी छावनी की अन्तिम सीमा तक पहुँचाने जा रहा था। शायर फ़ैज़ी तो पहले ही दिल्ली को रवाना हो चुका था; वज़ीरे-आज़म अबुल फ़ज़ल और कल्याणमल और अतग़बेग उसके पीछे पीछे चले आ रहे थे। युद्ध के प्रयाण ने सबके हृदय में एक अनोखा उत्साह भर दिया था। आज भी बादशाह, बीरबल से नये नये प्रश्न पूछने के लिए उतावला हो रहा था, क्योंकि बीरबल के साथ होने पर बादशाह अपनी इस भावना को नहीं रोक सकता था। उसने पूछा—

"राजाजी, जगत में किसका विश्वास नहीं करना चाहिए?"

"ग़रीब परवर, काना, टूटे हाथ वाला, लँगड़ा और छोटी गर्दन वाला—इन चारों का विश्वास नहीं किया जा सकता!"

"यूसुफ़ की गर्दन छोटी है!" वज़ीर ने चुटकी ली। बादशाह ने दूसरा प्रश्न किया।

"नमक हराम कौन है?"

"जो जिसका खाये, उसी की निंदा करे वह!"

"सब से नीच कौन?"

"देशद्रोही !"

"बिलकुल ठीक फरमा रहे हैं राजाजी ! यूसुफ़ को जीतने के बाद ये तीनों जवाब उसी के मुँह से कहलवाइएगा—ये तीनों ऐब उसमें हैं !" आख़िरी वाक्य बादशाह ने अधिक सख़्ती से कहे थे। छावनी की सीमा समीप आती जा रही थी। बादशाह कोई गहरी बात सोच रहा था। कुछ देर के बाद उसने फिर पूछा—"राजाजी, सबसे नरम चीज़ कौन सी है ?"

"हुज़ूर, जिसकी आँखों में शरम, वही सब से नरम !"

"वाह राजाजी !" कनखियों से बीरबल की ओर देखकर बादशाह ने कहा।

"अब हुक्म दीजिए हुज़ूर, छावनी की हद ख़त्म हो चुकी है !"

"राजाजी," घोड़े को रोककर बादशाह ने मानो अन्तिम प्रश्न पूछा—" स्वर्ग में कौन जाता है और नरक में कौन ?"

"जहाँपनाह, मरने के बाद लोग जिसकी प्रशंसा करें, जिसके गुण गाएँ उसे स्वर्ग में गया हुआ समझा जाना चाहिए और जिसकी बुराई करें वह निश्चित रूप से नरक में गया है यह समझना चाहिए !"

बीरबल इतना कहकर घोड़े पर से कूदकर नीचे आया और घोड़े पर बैठे हुए बादशाह के क़दम चूमे। "अल्लाहो अकबर !" के गगनभेदी नादों के बीच बीरबल ने वहाँ से प्रस्थान किया।

हिन्दुस्तान का बादशाह घोड़े पर से, अपने पंजों के बल खड़ा होकर दूर दूर जाते हुए बीरबल को देख रहा था। वज़ीरे-आज़म अबुल-फ़ज़ल बादशाह और बीरबल के सवाल-जवाबों की उधेड़बुन में लगा था।

कल्याणमल दो बार धीरे धीरे बुदबुदाया—"हुज़ूर, लौटने का वक़्त हो गया; साँझ होने आई; वज़ीरे-आज़म आपका हुक्म सुनने के लिए तैयार हैं !"

परन्तु बादशाह का ध्यान दूर क्षितिज में सेना के साथ अदृश्य होते हुए बीरबल की ओर था !

तब अबुल-फ़ज़ल का संकेत पाकर कल्याणमल और अतगबेग बेसुध से बादशाह के पीछे चुपचाप खड़े हो गये।

धर्म के नाम पर हिन्दुस्तान में जो जो वितण्डावाद खड़े हुए और उसके परिणाम स्वरूप इस देश में जो जो अव्यवस्थाएँ हुईं, उतनी किसी और देश में नहीं हुईं। इस बार सीमा प्राँत के प्रकरण ने हद ही कर दी थी। सदियों से भारत के रखवाले उन पर्वतों के हिमाच्छादित शिखरों और उनकी खाइयों में से इन दिनों ठंडी लेकिन तेज़ आवाज़ सुनाई देती थी—"अल्लाहो अकबर!"

उन्हीं खाइयों में से जवाब के रूप में उसी की प्रतिध्वनि सुनाई देती थी—"अल्लाहो अकबर!"

युद्ध की संपूर्ण तैयारियाँ हो रही थीं। दोनों सेनाएँ एक ही अल्लाह के नाम और झंडे के नीचे खड़ी होकर एक दूसरे का सीना गोलियों से बींध देने और एक दूसरे की गर्दन उतार लेने के लिए तरस रही थीं। पठान के लिए बुद्धि की अपेक्षा हाथों से काम लेना अधिक सरल है; वह धर्म की अवहेलना भले ही सहन कर ले परंतु अपना मज़ाक उड़ाया जाना सहन नहीं कर सकता। अपनी ज़िद के नाम पर वह अपने बाप को भी गोली से उड़ा देने में नहीं हिचकिचाता, माँ को टुकड़े टुकड़े कर देने से भी नहीं चूकता। एक बार दूसरे के द्वारा उसके हृदय पर आधिपत्य स्थापित हो जाने के बाद वह स्वयं अपना नहीं रहता। यही कारण था कि इस नये 'रोशनाई' मज़हब ने भोले पठानों के हृदय पर सरलता से अधिकार जमा लिया था और उन्हें ग़लत रास्ते ले जाकर उभारने में उसे बहुत सफलता मिली थी।

यकायक हमला करके आदमियों को उड़ा ले जाने और पलकों की एक टिमकार में लूट मचाकर अदृश्य हो जाने वाले पठानों में आज

ज़नून उठ रहा था और मज़हब के नाम पर वे सामने आकर दुश्मन से लड़ने को तैयार हो गए थे और उनमें यह आग सुलगा कर उन्हे खींच लाने वाला यूसुफ़ख़ाँ के सिवा कोई दूसरा नहीं था।

इन पठानों ने स्वादबूनेर और बाजोर में हाहाकार मचा रखा था; आसपास के क़रीब क़रीब सभी देहातों में उन्होंने अपना राज्य स्थापित कर लिया था। विजय के मद से उन्मत्त होकर पठान आज पहाड़ों के ऊपरी हिस्से पर इकट्ठे हो रहे थे और नीचे की खाइयों में उनके विरुद्ध बीरबल की ओर से व्यूह रचा जा रहा था और इसमें वे इस तरह से फँस चुके थे कि सामने आकर लड़ने के सिवा कोई चारा न था।

प्रभात होते ही खाई की तलेटी से युद्ध-घोषणा गूँज उठी—
"अल्लाहो अकबर !"

धर्मोन्मत्त पठानों ने दुगुने उत्साह से चिल्लाकर जवाब दिया—
"अल्लाहो अकबर !"

"अल्लाहो अकबर !" ईश्वर तो महान् पहले भी था और अब भी है किंतु उसी के नाम पर मर मिटने के लिए तैयार हो जाने वाले इन पठानों के ज़नून का यह एक हास्यास्पद होते हुए भी भीषण स्वरूप था !

बीरबल, दुश्मनों को अधिक समय देना नहीं चाहता था; उसका मन यूसुफ़ से मिलने के लिए उतावला हो रहा था। रात या दिन की पर्वाह न करते हुए उसने जिस तेजी से यहाँ घेरा डाला था, वह पठानों के अनजाने में उन्हें शिकंजे में कस लेने का प्रमाण था। युद्ध प्रारंभ करने से पहले पठानों को दुश्मन की ललकार सुननी पड़ी !

बंदूकों की आवाज़ों और रणभेरी की ध्वनि के साथ बीरबल ने दुश्मन पर करारा वार किया; वह सेना के बीचोंबीच था। रणक्षेत्र में ज़िंदगी बिता देने वाले बड़े बड़े योद्धा हसन ख़ाँ, पन्नी, गदाबेग, राजा,

धर्मांगद, मुल्ला शेरी, संग्रामखाँ और ख्वाज़ा हिमामुद्दीन राजा के हौसले देख कर दंग रह गये। बातों के खेल में सबों को मात करने वाले बीरबल ने आज तलवार के खेल में भी सबों को नीचा दिखाना शुरू कर दिया था। तलवार हाथ में लेकर वह तूफ़ान की तरह बढ़ता चला जा रहा था। देखते ही देखते पठानों के झुंड के झुंड, ऊँटों पर लदी हुई शाही तोपों की मार से चीख़ चीख़ कर नीचे आकर लड़ने लगे।

बीरबल यही चाहता था; गोलियों की बरसात में शाही तलवार हाथ में लेकर वह यूसुफ़ को ढूँढ़ने निकला, लेकिन वह कहीं दिखाई नहीं दिया।

पठानों के उन्मत्त क्रोध ने ऊँट, बैल और घोड़ों को भी आदमियों के साथ साथ काटना शुरू कर दिया किंतु पर्वतों में रहने वाले प्राणी आज पर्वतों से भी अधिक दुर्भेद्य शाही व्यूह को न तोड़ सके—राजा बीरबल का जाल उन्हें तेज़ी से जकड़ता जा रहा था। जिसके परिणाम-स्वरूप सैकड़ों पठान कट कट कर गिरते जा रहे थे; न वे भाग कर वहाँ से निकल सकते थे और न लड़ ही सकते थे! शाही तोपची और बंदूक़धारी सिपाही अविरत गोलों और गोलियों की वर्षा से पठानों को भुन रहे थे; देखते ही देखते रणक्षेत्र के छोटे छोटे पहाड़ और झरने रक्त की धारा से लाल हो गये। कुछ ही समय में हज़ारों पठान मौत के घाट उतार दिये गये, बहुत से जीवित बंदी बना लिये गये और थोड़े बहुत अपनी हार निश्चित समझ अपने कटे हुए अंगों को रणभूमि में छोड़कर भाग निकले! किंतु उन सबों में यूसुफ़ कहीं दिखाई न दिया। जितने पठान वहाँ से भाग चुके थे उनको भगाने वाला वही था। युद्ध के समय बड़ी बड़ी पहाड़ी चट्टानों की ओट में, मुँह पर नक़ाब चढ़ाये, मार खाये हुए पठान सरदारों को फिर जोश दिला रहा था—यही कारण था कि बीरबल उसे न पा सका।

यूसुफ़ जीना चाहता था, मरना नहीं। भागे हुए पठानों को दूसरी लड़ाई के लिए उसने फिर तैयार कर लिया। इस बार उसने

जान-बूझ कर रोशनाई सरदारों को भेजा था क्योंकि स्वयं वह युद्ध की अंतिम सीमा के बाद आना चाहता था।

पठानों के लिए मरने का उतना मूल्य नहीं होता, जितना कि दूसरों को मारने का! कुछ ही घंटों में वर्तमान रण-क्षेत्र से दस मील की दूरी पर यूसुफ़ ने फिर पठानी फौज को तैयार कर लिया और राजा बीरबल की मदद को आने वाले हकीम अब्दुल फ़तह पर अचानक हमला कर दिया; इस अनायास आक्रमण के कारण शाही सेना को विवश होकर पीछे हटना पड़ा।

इस क्षणिक विजय ने पठानों को फिर उन्मत्त कर दिया। यूसुफ़ ने अवसर से पूरा लाभ उठाया। विजय की ख़बर सुन कर बहुत से घबराये हुये पठान फिर यूसुफ़ से आ मिले। उसने बीरबल की ही युक्ति से काम लिया। दूसरी ओर से राजा बीरबल की सेना की एक टुकड़ी का नेतृत्व युद्धकुशल सरदार जैनखाँ कोका कर रहा था। रात ही रात में पहाड़ी प्रदेश की एक लम्बी मंज़िल तय कर के उसने सरदार जैन खाँ का रास्ता रोक लिया और स्वयं छुप गया। जैन खाँ के समीप आते ही यूसुफ़ जाई पठान पुनः भूखे भेड़ियों की तरह शाही सेना पर टूट पड़े। कुछ समय पहले प्राप्त की हुई विजय से वे उन्मत्त हो रहे थे। बंदूक, तलवार, कटारी, भाले-बर्छी और पत्थर जो कुछ भी हाथ में आ रहा था, लेकर पठान शाही सेना पर वार कर रहे थे। यूसुफ़ ने स्वयं बादशाह से ही युद्ध-कौशल सीखा था। इस बार उसने पठानों को छोटी-छोटी टुकड़ियों में विभाजित कर दिया और उन्हें आदेश दिया कि वार कर करके भागते जायँ। शाही सेना के लिए रास्ता बहुत छोटा और जगह अनजानी थी किंतु पठानों के लिए यह युद्ध बहुत सरल था। जैन खाँ जान हथेली पर लेकर लड़ रहा था किंतु पठानों की मार से शाही सेना का शीघ्रता-पूर्वक संहार हो रहा था। पठानों के लिए शाही सैनिकों की गर्दन उड़ा देना इस बार खेल से अधिक कुछ नहीं था। "अल्लाहो अकबर" की आवाज़ दबती जा रही

थी और पठानों की विचित्र पहाड़ी चिल्लाहट पहाड़ों से टकरा-टकरा कर गूँज रही थी। जीवन में पहली बार जैन खाँ को पीछे हटना पड़ा।

यकायक पश्चिम की ओर धूल उड़ती दिखाई दी; हकीम अब्दुल फ़तह जैनखाँ की मदद को आ रहा था। जैनखाँ के हतोत्साहित सैनिकों के हृदय में फिर आशा का संचार हुआ और वे दुगुनी तेजी से लड़ने लगे।

फिर भीषण युद्ध प्रारंभ हुआ। किंतु इस बार भी दुर्भाग्य ने शाही सेना का साथ न छोड़ा। पठानों की संख्या अधिक थी और अब तक वे विजय के उन्माद से उन्मत्त हो रहे थे। वह उनकी भूमि थी और पहाड़ों में युद्ध करने का ढंग उन्हें आता था। उन्हें विश्वास था कि विजय उन्हीं का साथ दे रही है। दोनों सेनाएँ अपनी समस्त शक्ति काम में ला रही थीं। अन्त में पठानों की शक्ति क्षीण होती प्रतीत हुई किंतु संध्या होने में अब अधिक समय न था। शाही सेना में धीरे धीरे फिर निराशा फैलने लगी। अपूर्व वीरता के साथ अपनी जान की बाज़ी लगा देने पर भी जैन खाँ और हकीम अब्दुलफ़तह सिपाहियों में नया जोश पैदा न कर सके। शाही सेना की विजय संदिग्ध होती जा रही थी।

यकायक आकाश में गूँजती हुई 'अल्लाहो अकबर' की आवाज़ सुनाई दी। पठानों ने यह समझ कर कि दूसरे पठान उनकी मदद को आ पहुँचे हैं, और तेज़ी से लड़ना शुरू किया। यूसुफ़ ने भी आज अपनी समस्त शक्ति लगा दी थी। उसे विजय का पूरा पूरा विश्वास था। 'अल्लाहो अकबर' की ध्वनि ने थके हुए पठानों में नये प्राण फूंक दिये और वे अधिक शीघ्रता से शाही सेना का संहार करने लगे। यूसुफ़ का विश्वास था कि पठानों की नई टुकड़ी की मदद से वह शाम होने से पहिले शाही सेना को परास्त कर देगा; वह चीख़ चीख़ कर

पठानों को ललकार रहा था—"शाबाश मेरे बहादुरो ! याद रहे, एक भी शाही सिपाही मैदान छोड़कर ज़िन्दा न निकलने पाए !"

लेकिन—

कुछ ही क्षणों में पठानों को होश आया—पठान शाही सिपाहियों को नहीं, पठानों को ही काट रहे थे। 'अल्लाहो अकबर' की आवाज़ पठानों ने नहीं, राजा बीरबल की सेना ने दी थी !

जैनखाँ और अब्दुलफ़तह की जान में जान आई; हार की अन्तिम घड़ियों में ही रंग पलट चुका था। राजा बीरबल के साथ आई हुई सेना ने सचमुच पठानों का क़त्ले-आम करना शुरू कर दिया; पठानों के प्रत्येक सिपाही को पकड़ पकड़ कर मौत के घाट उतार दिया जाने लगा। इसी बीच बीरबल की दृष्टि, यूसुफ़ पर जा पड़ी। फिर क्या था, राजा आगे बढ़ने लगा और जैन खाँ उसकी रक्षा करते हुए उसके साथ हो लिया। अब शाही फ़ौज की जीत निश्चित थी। यूसुफ़ अपनी स्थिति समझ गया; लम्बे समय से वह राजा बीरबल को अपने हाथों मार डालने के सैकड़ों मनसूबे बाँध चुका था किंतु यह समय उसे ठीक प्रतीत नहीं हुआ। मरते हुए पठानों को वहीं छोड़कर वह चन्द पठानों के साथ चुपचाप वहाँ से भाग निकला।

शाम होते होते पठानों की हज़ारों लाशें ज़मीन पर थीं। यह उनकी बड़ी से बड़ी हार थी, ऐसी हार, कि जिसके बाद वे कभी उठकर सामना न कर सकें !

फिर एक बार हिन्दुस्तान की शाही सेना ने एक बहुत बड़े विद्रोह को धूल में मिला दिया और उसका श्रेय मिला राजा बीरबल को ! फिर एकबार उसी ने बादशाह की हुकूमत को नई ताक़त दी। जीत के बाद शाही सिपाहियों ने पठानी देश के देहातों की भी ख़बर ली। इस जीत से जैन ख़ाँ और अब्दुलफ़तह का युद्ध-चातुर्य बीरबल के सामने फीका पड़ चुका था। यद्यपि वे बहादुर थे और बहादुरी की

क़दर करते थे किंतु अकबर का बीरबल के प्रति पक्षपात उन्हें खटकता था। इस बार राजा को बधाई देते समय उनका द्वेष छुपा न रह सका।

बीरबल को इन सरदारों की पर्वाह न थी। उसे केवल एक ही व्यक्ति से मिलने की इच्छा थी, जो कि इतने बड़े संहार के लिए उत्तरदायी था। यूसुफ़ खाँ को ढूँढ़ने में बीरबल ने कोई कसर न रखी। पठानों के साथ लड़ने के बाद बीरबल भी उनसे प्रभावित हो चुका था; बिना सोच-विचार के, विजय के उन्माद में उन्मत्त होकर वह तलवार लेकर यूसुफ़ खाँ को ज़िंदा पकड़ लाने के लिए निकल पड़ा।

इस घटना के चौथे दिन अकबर की शाही छावनी आनन्दोत्सव में डूबी हुई थी। अकबर ने गौरव के साथ, वहाँ आये हुए तुर्की राजदूत को, अपने मित्र और सरदारों की विजयगाथा कह सुनाई। राजा के प्रति अकबर का विश्वास आज सफल हुआ था। बीरबल ने इस बार प्रमाणित कर दिया था कि साम, दाम और भेद के साथ वह दंड देने में भी किसी से कम न था। अकबर के लिए यह साधारण गर्व की बात न थी। उसका हृदय आनन्द से नाच रहा था!

—*—

(२५)

हीरावल घाट और काराकुई के सँकरे घाट से छै मील उत्तर की ओर जंगल में, दिन होते हुए भी श्मशान की-सी शान्ति फैल रही थी।

एक पेड़ के नीचे जैन खाँ कोका, जो अभी अभी घायल हुआ था, दूसरे सिपहसालार हकीम अब्दुल्ला के साथ सिर पर हाथ दिये बैठा था और उन से कुछ ही दूरी पर पाँच सौ शाही सिपाही भारी

हृदय से, अतिशय लज्जित होकर गर्दन झुकाये बैठे थे। कुछ सिपाही चुपचाप आँसू बहा रहे थे मानो उनकी लज्जा उन्हें सिसकने से भी रोक रही हो। हवा के हलके झोंकों से काँपते हुये सूखे पत्ते और शस्त्रास्त्रों से आहत ऊँटों का कराहना, वातावरण को और भीषण बना रहा था। अस्त्र-शस्त्र इस तरह बिखरे हुए पड़े थे मानो उनका उपयोग और महत्त्व समाप्त हो चुका हो! किसी को उस भीषण मौन को तोड़ने का साहस नहीं हो रहा था। वहाँ बैठा हुआ प्रत्येक सिपाही एक तीव्र वेदना का अनुभव करते हुए चुपचाप ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था कि वह उसी तरह चुपचाप उसे ऊपर उठा ले!

राजा बीरबल वीरगति को प्राप्त हो चुका था!

हकीम अब्दुल्ला के साथ-साथ बहादुर सरदार जैन खाँ भी अपनी विवेक-बुद्धि खो बैठा था; वेदना के आघात से हृदय टूक-टूक हो चुका था; किसी को यह समझ में नहीं आ रहा था कि क्या और कैसे कहा जाय?

आख़िरकार संग्रामखाँ उठा, जिसकी एक भुजा युद्ध में कट चुकी थी, और शाही तलवार और कटार लाकर उसने जैन खाँ के सामने रख दी जिन्हें देखते ही वह हृदयभेदी चीख़ के साथ रो पड़ा। इस चीख़ ने सारी छावनी को कँपा दिया; कटार के साथ एक भुजा भी कटी हुई उसे मुट्ठी में कसकर दबाये हुई थी। जैनख़ाँ—जवाँ मर्द जैनख़ाँ—उसे देख कर फफक फफक कर रो रहा था!

कुछ समय के बाद जब रोने से हृदय हलका हुआ, जैन खाँ को कल की घटनाएँ चलचित्र की तरह क्रमशः याद आने लगीं। वह यकायक पागलों की तरह चिल्ला उठा—"वाह मेरे राजा वाह! जीना तुझे ही मालूम था, मेरे बहादुर वाह!!"

"इसके सिवा किसी चीज का पता नहीं लग सका!" संग्राम खाँ भरी हुई आवाज़ के साथ बोला।

"कैसे पता लगेगा हम जैसे गँवारों को ? ज़िंदा रहते हम जिसकी थाह नहीं पा सके, मरने के बाद हम उसका ख़ाक़ पता लगा सकेंगे !" जैन ख़ाँ पागलों की तरह बड़बड़ाता हुआ उठ खड़ा हुआ; पश्चाताप से उसका हृदय सुलग रहा था । राजा बीरबल-से नरवीर से द्वेष करने के कारण वह स्वयं धिक्कृत हो रहा था । कल ठीक इसी समय राजा बीरबल रणसंग्राम में दुश्मनों क दांत खट्टे कर रहा था और आज....!

...कैसी भीषण पराजय ! शाही फौज ने आज तक ऐसी पराजय नहीं देखी थो; तीन हज़ार में से एक भी सिपाही जीवित न बचा था ।

पुनः कल के भीषण दृश्य जैनख़ाँ की आँखों के सामने आकर नाचने लगेः—

पठानों को जीत लेने के बाद राजा बीरबल स्वयं यूसुफ़ को ज़िंदा या मुर्दा पकड़ कर लाने के लिए तैयार हो चुका था । अनुभवी जैन खाँ ने सलाह दी कि हमने जो कुछ जीता है, इस बार के लिए काफ़ी है । अगर और आगे गये तो नुकसान उठाना पड़ेगा । अनजाने पहाड़ी मुल्क में प्रविष्ट होना अपने आपको ख़तरे में डालना है ।... किंतु रणसंग्राम में पैर रखने के बाद लौटना किसे सुहाता है ? बीरबल ने जैन खाँ की एक न सुनी । जैन खाँ ने पुनः जीते हुए प्रदेश में से चौथाई वसूल करके लौट जाने की सलाह दी; हकीम ने भी जैनख़ाँ का ही समर्थन किया किन्तु राजा बीरबल अपने एक ही वाक्य पर अडिग रहा—"इन सब रोगों की जड़ का सर्वनाश किये बग़ैर यहाँ से लौटना व्यर्थ है !"

सरदारों ने बीरबल से वाद-विवाद किया किंतु बीरबल न माना; परिणाम स्वरूप मतभेद ने भयंकर रूप धारण कर लिया—शाही सिपहसालारों के दो पक्ष हो गये; राजा बीरबल एक तरफ़ एवं जैन ख़ाँ के साथ वाले अन्य सरदार दूसरी तरफ ! दूसरे दिन बीरबल, पाँच सौ शाही सिपाही जैन ख़ाँ के नेतृत्व में छोड़ कर स्वयं तीन हज़ार शाही

फौज के साथ रवाना हुआ। पहले दिन हीरावल घाट के पास युद्ध हुआ जिसमें पठानों को हार खानी पड़ी। बीरबल आगे की चिंता किये बिना आगे ही बढ़ता गया; तीन दिनों में बीरबल ने काराकुई की खाई का कोना कोना छान मारा किंतु यूसुफ़ उसे कहीं दिखाई नहीं दिया।

तीन दिनों का समय पाकर पठान यूसुफ़ के आदेशानुसार फिर एकत्रित हो चुके थे।

दो व्यक्ति भी एक साथ न चल सकें इतने संकीर्ण मार्ग से जब राजा बीरबल अपनी सेना का नेतृत्व किये चला जा रहा था, तभी अवसर पाकर पठान अचानक बाहर निकल आये और ऊपर की ओर से पत्थर और नीचे से गोलियाँ दागना शुरू कर दिया। कुछ ही क्षणों में बीरबल की सेना के आधे से अधिक सिपाही और जानवर पत्थरों और गोलियों की मार से हताहत होते हुये खाईं में टकरा कर गिरते हुए चकनाचूर हो गये!

फिर भी बीरबल ने साहस न छोड़ा, वह अपनी सेना की पूरी शक्ति के साथ शत्रु पर टूट पड़ा। सेनापति की अटूट वीरता ने सिपाहियों में बिजली का असर पैदा कर दिया। पठानों की संख्या कई गुनी थी लेकिन बीरबल की ललकार से उत्तेजित हो मुग़ल सिपाहियों ने पठानों के छक्के छुड़ा दिये। सिपाहियों में जोश भरता हुआ बीरबल रणक्षेत्र में घूम रहा था कि उसे अचानक यूसुफ़ दिखाई दिया; एक ही क्षण में दोनों सामने थे।

बीरबल को अचानक सम्मुख आया देखकर यूसुफ़ भी अन्तिम क्षण के लिये तैयार हो गया। उधर पठानों की विचित्र चिल्लाहट बढ़ती जा रही थी; पहाड़ की ऊँची-नीची टेकरियाँ उनके विचित्र युद्ध को अनुकूल बनाती जा रही थीं। बीरबल ने देखा कि उसके सिपाही पीछे नहीं हट रहे थे लेकिन कट कट कर वहीं वीरगति पाते जा रहे थे। शाही सिपाहियों की संख्या इस तरह शीघ्रता से कम होने लगी। अब

उसे यूसुफ़ को जीवित बंदी बनाना असंभव प्रतीत हुआ किंतु उसे जीवित न छोड़ने का भी उसने दृढ़ संकल्प कर लिया। अवसर जाता रहा है यह समझकर वीर बीरबल अकबर की दी हुई तलवार उठाकर पठानों की भीड़ में घुस पड़ा और पठानों के धड़ों को धरती पर सुलाता हुआ यूसुफ़ के सामने आ खड़ा हुआ!

शाही तलवार को हवा में घुमाकर बीरबल ने ललकारा—"यूसुफ़ ख़ाँ अब भी मान जाओ, शाही तलवार का सम्मान करके उसके साथ हो जाओ या उससे टक्कर लो!"

यूसुफ़ ने जवाब में एक विचित्र चिल्लाहट के साथ बीरबल पर अचानक वार किया; बीरबल ने तेजी से नीचे झुककर वार बचा लिया। फिर अकबर बादशाह की दी हुई तलवार को अपनी पूरी ताक़त से ऊपर उठाकर यूसुफ़ की गर्दन पर वार किया....धड़ और मुण्ड अलग अलग जा गिरे! यूसुफ़ की इतनी शीघ्र मृत्यु ने बीरबल की वैराग्नि को शान्ति नहीं किया—घायल घोड़े पर से नीचे कूद कर उसने कमर में से कटार निकाली; आँखों से आग निकल रही थी और देह एक विचित्र उत्तेजना से थरथरा रही थी...!

सिपहसालार जैन ख़ाँ और हकीम पाँच सौ सिपाहियों के साथ शाही डेरे की ओर दूसरे रास्ते से जा रहे थे कि यकायक उनका विचार बदल गया और बीरबल की रणभूमि में आ पहुँचे।...किन्तु उन्होंने बहुत देर करदी थी; शाही सेना के तीन हज़ार सिपाही—सब के सब खेत रहे थे। युद्ध की स्थिति देख कर, जैन ख़ाँ क्रोध में सुधबुध भूल कर पाँच सौ सिपाहियों के साथ पठानों पर टूट पड़ा। आते ही उसने बीरबल को यूसुफ की गर्दन उड़ाते हुए देख चुका था और साथ ही साथ उसने यह भी देखा कि उसी क्षण लगभग सौ पठानों का झुंड राजाजी को चारों तरफ़ से घेर कर तलवारें, बर्छियाँ उछालता हुआ उन पर टूट पड़ा था! बीरबल के पास युद्ध के लिए केवल एक कटार थी। परिणाम की कल्पना से ही ज़ैनख़ाँ पागल सा हो गया और अपने सभी सिपाहियों

के साथ सैकड़ों पठानों का काम तमाम करते हुए, वहाँ पहुँच कर देखा कि बीरबल के टुकड़े टुकड़े हो चुके थे ! ज़ैनख़ाँ ने अपनी समस्त उत्तेजना और वीरता को आँखों में भरकर देखा कि उसके सब प्रयत्न व्यर्थ हो चुके थे; बीरबल का एक अंग भी ऐसा नहीं बचा था कि जिससे उसके शरीर का अस्तित्व पहिचाना जा सके !!

उन्मत्त जैनख़ाँ को, चालीसों मनसबदार अपनी पूरी शक्ति से अगर रणक्षेत्र से नहीं हटाते तो शाही सेना का एक भी सिपाही उस समय जीवित न बचता !

रात ही रात में छै मील की दूरी तय करके शाही सिपाही ख़तरे से बाहर निकल आये थे; संग्रामख़ाँ और उसका साथी हाज़ीताश पीछे रह गये थे। पठानों के जाने के बाद दो घायल सिपाहियों ने तीन हज़ार मुर्दों को एक एक कर के ढूँढ़ा लेकिन बीरबल का कहीं पता न लगा। पठानों ने बीरबल के शरीर के प्रत्येक अंग को टुकड़े टुकड़े कर डाला था—न सिर था, न धड़ था, न और कुछ—मिली तो अकबर की शाही तलवार और अन्तिम समय बीरबल के हाथों में रही हुई कटार ! वही लाकर संग्रामख़ाँ ने उन्मत्त जैनख़ाँ के सामने रख दी !

पुनः तलवार और कटार देखकर जैनख़ाँ पागल सा उठ खड़ा हुआ और अतीव करुणता से चीख़ उठा—"हकीम, मैं कायर और निकम्मा हूँ ! यह ख़बर लेकर आलमपनाह के सामने मैं हरगिज़ नहीं जा सकता। अनेकों अकबर बादशाह और सैकड़ों बीरबल पैदा होंगे लेकिन बीरबल और अकबर की जोड़ी हज़ारों साल में खुदा एक ही बार भेजता है ! ख़ुदाहाफ़िज़ हकीम ! दुनिया कुछ नहीं है, कुछ नहीं है...नाकामयाब है !..."

चीख़ता हुआ ज़ैनख़ाँ पागल की तरह दौड़ने लगा और कोई उसे पकड़ सके उसके पहले ही वह खाईयों की ओर जा कर अदृश्य हो गया था !

दूसरे दिन जब शाही छावनी कूच करने लगो तो आश्चर्य के साथ मालूम हुआ कि सिपहसालार हकीम अबुलफ़तह भी न जाने कहाँ अदृश्य हो गया था !

किसी में इतना साहस न था कि बादशाह के सामने बीरबल की मृत्यु का समाचार लेकर खड़ा रहे !

इसी तरह सात दिन बीत गये।

अंत में, एक रात को संग्रामखाँ शाही छावनी में आकर बूढ़े पुराणी चाचा को चुपचाप एकांत में ले गया और आधे घंटे के प्रयत्नों के बाद साफ़ साफ़ बता सका कि बीरबल वीरगति पा चुका है !

पुराणी चाचा आख़िर शास्त्र वक्ता ही था; अत्यधिक वृद्ध होते हुए भी उसने यह तीव्र आघात सहन कर ही लिया। संग्रामखाँ का प्रत्येक शब्द उसने धैर्यपूर्वक सुना। उसी रात को, बच्चों के सो जाने के बाद, पुराणी चाचा ने उमा को धीरे से बुलाया। चाचा की आँखों में न आँसू ही आ पाये न भावावेश में उसका गला ही भर आया। अतीव शांतिपूर्वक उमा के सिर पर हाथ रखकर वह बोला—"बहूरानी, तेरी सौत तुझसे जीत गई; राजा बीरबल ने कीर्ति का वरण किया है !"

उमा पर वज्राघात हुआ; बिना एक शब्द भी कहे वह वृद्ध के चरणों में गिर पड़ी। बूढ़े ने यह सब पहले से ही सोच लिया था। हज़ारों बिच्छुओं के विष की पीड़ा चाचा ने चुपचाप सहन कर ली थी। उसने बहू को धीरे से पलंग पर सुला दिया और भगवद्गीता के दूसरे अध्याय के श्लोक गुनगुनाता हुआ वह उमा की सुधि का उपचार करने लगा।

एक ही प्रहर में सारी छावनी में यह बात फैल गई किंतु सुनने के बाद सब के मुँह पर मनों के ताले पड़ गये। वज़ीरे-आज़म राजाजी की जुदाई में अपने आँसू न रोक सके और अतग तथा कल्याणमल फूट फूटकर रोने लगे !

किंतु अकबर के सामने जाकर यह बात कौन कहे यही सब से बड़ी समस्या थी।

यही समस्या सब के हृदय और मस्तिष्क को अशान्त किये दे रही थी।

अन्त में शेख़ अबुलफ़ज़ल सभी बड़े बड़े सरदारों को लेकर उमा के सामने सिर झुका कर खड़ा हो गया। उमा जीवित कैसे रही और ज्ञानवृद्ध चाचा ने उसे कैसे बचा लिया इस प्रश्न से वह बार बार आश्चर्यचकित हो रहा था।

उमा अपने तीनों बच्चों को लिये एक ओर बैठी थी। काले वस्त्रों में, सिर ढाँक कर बैठी हुई उमा को देखकर वज़ीर का हृदय भर आया, न वह और न इतने सरदारों में से कोई कुछ बोल सका।

भीष्म पितामह-से वृद्ध पुराणी चाचा ने सरदारों के यहाँ आने का कारण समझ लिया था।

"आप सब पधारिये, दरबार के समय मैं खुद वहाँ आ जाऊँगा!" कह कर पुराणी चाचा ने सबों को बिदा किया और बच्चों के पास चला आया।

सिपाही भी यह बात जान चुके थे और ज़नानखाना भी; किन्तु किसीने अकबर को ख़बर न होने दी। स्वयं अकबर बहुत दिनों से चिन्तातुर था क्योंकि पठानों की विजय के बाद दस दिनों से उसे बीरबल का कोई समाचार नहीं मिला था। अकबर ने आग्रहपूर्वक कुछ ईरानी सरदारों को इसलिए रोक रखा था कि बीरबल के आने पर वे उससे मिलें किन्तु राजाजी की ओर से कोई संदेश ही नहीं आया।

ठीक समय पर दरबार हुआ। वकीले-सल्तनत और दूसरे सरदार भी आये। एक एक करके सभी सरदार आये और सिर झुका कर अपनी अपनी जगह बैठ गये।

अन्त में स्वयं बादशाह आया। सरदारों की गम्भीर मुद्रा देख कर वह चिन्तित हो उठा—क्या शाही सेना हार गई? वह वज़ीरे-आज़म से यह बात पूछने ही वाला था कि अतग के साथ बीरबल के दो लड़कों और पुराणी चाचा ने शाही शामियाना में प्रवेश किया।

अकबर विस्फारित नेत्रों से उन्हें देखता रह गया, तीनों ने काली पोशाक पहन रखी थी। बादशाह जड़ बनकर बीरबल के पुत्रों को देख रहा था। धीरे धीरे उसके ओंठ भीतर की ओर झुक चले, दाँत भिच गये। उसका हृदय हाहाकार कर उठा—"नहीं, नही, यह नहीं हो सकता! यह झूठ है, झूठ है, बिलकुल झूठ है!"

पुराणी चाचा का संकेत पाकर हरिहर और लाल तस्लीम करके बादशाह के बिलकुल समीप आ गये और राजा बीरबल की शाही तलवार और कटार चुपचाप उसके पैरों के पास रख दी।

मन को बहुत दबाते हुये भी इस आघात से बादशाह का चेहरा सफेद हो गया था; वह तीक्ष्ण दृष्टि से तलवार और कटार को देखता रहा। सारी सभा भय से थर थर काँप रही थी; वेदना से सबों के मस्तक झुक गये थे।

सब एक भीषण कड़क के साथ बिजली गिरने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

कुछ क्षणों तक एकटक तलवार और कटार देखने के बाद बादशाह ने वहाँ से दृष्टि हटा कर दोनों बालकों की ओर देखा जो बादशाह को ही ओर देख रहे थे। सरदारों ने धीरे धीरे गर्दन उठा कर यह देखा। बादशाह ने अपने दोनों हाथ फैलाये और दोनों को खींच कर अपने हृदय से लगा लिया। सरदार फिर एक बार अप्रत्याशित भविष्य की कल्पना करके काँप उठे।

बादशाह की खिंची हुई आँखें बन्द नहीं हो रही थी; दुःख में उसने ऊपर देखा—"या अल्लाह! परवर दिगार! परवर दिगार!!"

स्तब्ध सभा चुपचाप देखती रही—सुनती रही।

बादशाह ने ऊपर से दृष्टि हटा कर पुराणी चाचा की ओर देखा—उसके सफ़ेद बाल देखे, गम्भीर चेहरा देखा। कुछ क्षणों के लिये दोनों की आँखें चार हुईं; फिर बादशाह ने आँखें मूँद लीं। उसका हृदय अपार दुःख से द्रवित हो रहा था और मन क्रोध की ज्वाला में झुलस-झुलस कर छटपटा रहा था। हृदय से लगाये हुये बालकों को उसने अपने और समीप दबा लिया।

इसी तरह चुपचाप कुछ समय बीत गया। शांत और स्तब्ध सभा की ओर दृष्टिपात करके उसने बालकों को अलग किया। प्रत्येक सभासद बादशाह के कुछ कहने की सिर झुका कर प्रतीक्षा करने लगा। अद्भुत आत्मसंयम रखते हुए उसने राजा बीरबल के पुत्र हरिहर को देखा।

"हरि, राजाजी के पीछे कितनी रानियाँ सती होंगी?"

सारी सभा आँखें उठा कर बादशाह को देखने लगी।

"तीन, जहाँपनाह।" हरि ने बिना घबराये उत्तर दिया।

"कौन-सी?"

"वीरता, सरस्वती और उदारता। माँ उमा विधवा हो गई है। केवल एक रानी सुहागन रहेगी।"

"वह कौन?"

"कीर्ति, आलीजाह!"

"वाह बेटा...!" पुराणी चाचा ने धीरे से कहा ताकि कोई सुन न ले और कोई देख न सके इस तरह आँखों में आया हुआ एक आँसू पोंछ लिया।

बादशाह की आँखें भीग आई थीं; बिलकुल पिता जैसा पुत्र—मानो राजा बीरबल ही बोल रहा हो। चाचा दोनों बालकों को लेकर जाने लगा।

उनके जाते ही एक दहाड़ सुनाई दी। बादशाह राजाजी की तलवार और कटार उठा कर चिल्लाया—"किसने किया यह ?" उसका सारा शरीर क्रोध से काँप रहा था।

"पठानों ने !" उत्तर मिला।

"क़सम है उस पाक परवर दिगार की अगर यूसुफ़जाई एक भी पठान बच जाये ! मैं खुद जाऊँगा, मैं अपने हाथों से बदला लूँगा—ऐसा बदला लूँगा—" बादशाह अधिक न बोल सका; क्रोध की तीव्रता से उसका स्वर दब गया था और उससे भी अधिक दुःख से उसका गला भर आया था।

वज़ीरे-आज़म अबुलफ़ज़ल बादशाह के सामने घुटनों के बल बैठ कर अनुनय करने लगा—"नहीं जहाँपनाह ! चारों तरफ लड़ाई छिड़ी हुई है और आपकी तबीयत ठीक नहीं है। मैं आज ही राजा मानसिंह और टोडरमलजी को यूसुफ़जाई की तरफ रवाना करता हूँ और आपका हुक्म हो तो मैं भी जाऊँ...और अगर हम लोग आपकी ख्वाहिश पूरी न कर सकें तो आप हमारे साथ पठानों के टुकड़े टुकड़े कर दीजियेगा लेकिन आप जाने का ख़याल छोड़ दें !"

बादशाह समझ गया कि वज़ीरे-आज़म सच कह रहा था किन्तु फिर भी उसका क्रोध कम न हुआ।

"वज़ीर, इसी वक्त शाही फौज तैयार करो—हर एक गाँव, हर एक पर्वत और पठानों को शाही गुस्से का शिकार बनाओ—एक भी बच न पाये। उन में से हर एक को सज़ा न मिलेगी तब तक मुझे चैन न मिलेगा। जाओ, सब चले जाओ, दूर हो जाओ मेरे सामने से, बिना बदला लिये मुझे मुँह न दिखाना ! आज अकबर बादशाह नहीं मुफ़लिस है..."

अंतिम वाक्य उसने अपने आप से कहा था।

उसने सबसे जाने के लिये कहा, लेकिन कोई अपनी जगह से हिल भी न सका मानो सब सरदार अपनी अपनी सज़ा सुनने के लिये

तैयार बैठे थे। बादशाह की हार्दिक पीड़ा का अनुभव प्रत्येक हृदय में हो रहा था। आज अकबर की वेदना और क्रोध बाहर व्यक्त नहीं हुए–स्वयं उसी के हृदय को कुरेद कुरेद जलाने लगे।

साँझ होने को थी; सूर्योपासना को सूचित करने वाली घंटियाँ बज उठीं। सारा दरबार उठ बैठा। अकबर ने आँखें मूँद कर अत्यन्त कष्ट के साथ मन्त्रोच्चारण प्रारम्भ किया। दरबार का प्रत्येक व्यक्ति सिर झुकाकर उस भग्न हृदय के टूटे स्वरों को सुनता रहा।

---

(२६)

शहनशाह जलालुद्दीन अकबर खड़ा था; द्वार की ओर पीठ किये।

यही वह स्थान था, जहाँ संसार के अनेकानेक उत्तम ग्रन्थों ने फ़ारसी 'बाना' पहिना था; जहाँ फैज़ी, देवी मिश्र, फ़ज़ल और जगन्नाथ पंडित, फ़ारसी और संस्कृत साहित्य की गहराइयों में डूबे रहते थे। यही वह स्थान था जहाँ एक दिन अब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना ने रसिक साहित्यकारों के सामने गाया था—

रत्नाकरोस्ति सदनं गृहिणीच पद्मा
किं देयमस्मि भवते जगदीश्वराय।
राधागृहीत मनसेऽमनसे च तुभ्यं
दत्तं मया निज मनस्तदिदं गृहाण॥ ❀

—और जिसे सुनते ही राजा बीरबल ने ऊँचे स्वर से "धन्य धन्य" पुकार कर अकबर बादशाह के उस महान सेनापति को अपने हृदय से लगा लिया था।

❀ रत्नाकर (समुद्र) आपका घर और लक्ष्मी आपकी पत्नी है फिर जगदीश्वर! आपको मैं क्या दूँ? हाँ, राधा ने आपका मन ले लिया है सो आप मन रहित हो गये हैं, इसीलिए मैं अपना मन आपको देता हूँ—स्वीकार कीजिए।

राजा बीरबल !......हाँ, यही वह मकतबख़ाना था जहाँ राजा बीरबल की विद्वता अपनी सोलहों कला बिखेर रही थी !....

वही मकतबख़ाना, जिसके वातायन से अकबर आज दूर क्षितिज में विलीन हो जाने वाले न जाने किस पथ को निहार रहा था। वहाँ वह अकेला था और छाया की तरह उसके साथ रहने वाले अतग और कल्याणमल घोड़ों को लिये बाहर खड़े थे। तीन दिनों से भूख-प्यास बिसराकर चौथे दिन अकबर अकेला फ़तहपुर सीकरी चला आया था। अन्न और जल का अस्तित्व ही जैसे संसार में उसके लिये नहीं था। जब वह शाही छावनी से निकला, तब उसने गुजरात के सूबा और अजित सेनापति अब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना को एक फ़रमान भेजा था, जिसमें बादशाह का हृदय रो रो कर बार बार एक ही बात कह रहा था—

दीन जान सब दीन, एक दुरायो दुःसह दुःख,
सो अब हमको दीन, कछु नहिं राख्यो बीरबर।
पीथल सौं मजलिस गई, तानसेन सौं राग,
हँसिबो, रमिबो, ब्रोलिबो, गयो बीरबल साथ।

ख़ानख़ाना और बीरबल की अनेक स्मृतियाँ एक साथ एकाकी बादशाह के सामने आ आकर नाचने लगीं और फिर क्षितिज की ओर जाने वाले उस अनजाने पथ में विलीन हो गईं।

सूर्य पश्चिम की ओर दौड़ा चला जा रहा था; वृक्षों की ओट में। वही सूर्य था, वे ही वृक्ष थे, वही मकतबख़ाना था, किन्तु...

स्मृतियाँ फिर आँखों के सामने आकर नाचने लगीं—एक दिन इसी तरह, इसी खिड़की के पास खड़ा था और बीरबल के साथ अनेकों सरदार उसके पीछे की ओर सिर झुकाये खड़े थे।....चौंक कर अकबर ने पीछे घूम कर देखा—वहाँ कोई नहीं था।...

...धीरे धीरे उसे रजबनामा की घटनाएँ याद आने लगीं—बरसों के नाम पर समय की डोर में बंधी हुई गाँठें खुल गईं—स्मृति-

पट पर धुँधले धुँधले दिखाई देने वाले अक्षर स्पष्ट होने लगे। बादशाह एक विलक्षण स्मृति में डूब कर धीरे धीरे उस स्थान पर आकर खड़ा हो गया जहाँ उस दिन बीरबल खड़ा था।

अक्षरों का धुँधलापन मिट गया और अब उसे वे शब्द बन कर स्पष्ट दिखाई देने लगे। पक्षियों का कलरव एक मधुर संगीत बन कर उसकी मीठी स्मृतियों को उभार उभार कर स्पष्ट करने लगा और हवा का झोंका बार बार उसके कानों से टकराकर उस स्मृति के वातावरण को गम्भीर बनाने लगा।...जैसे कल ही यह सब कुछ हुआ हो! नहीं नहीं, आज इसी समय यह हो रहा हो—हो रहा है। वे शब्द उसे साफ़ साफ़ सुनाई देने लगे और वह अपनापन और आसपास के वातावरण को भूल कर आतुरतापूर्वक सुनने लगा—बीरबल अपने मधुर वचन सुना रहा था—"आलीजाह, कहने को तो मैं भी राजा हूँ, किंतु वह कैसा राजा, जो सुख मिलने पर सब कुछ भूल बैठे और दुःख को को देखते ही काँपने लगे। राजा ईश्वर का भेजा हुआ वह देवदूत है जो उसके नाम पर प्रजा का पालन करता है। बादशाह, बादशाहत का रखवाला होता है। हुज़ूर, इसी आर्यावर्त के चक्रवर्ती राजाओं ने वचन के नाम पर पत्नी को बेच दिया है, कर्त्तव्य के नाम पर अपने हाथों अपने पुत्र का बलिदान किया है। ऐसे प्रातः स्मरणीय चक्रवर्ती राजाओं के साथ भारत की प्रजा ने अब आपका नाम लेना शुरू किया है। जहाँपनाह, आज फ़ारसी महाभारत समाप्त नहीं हुआ बल्कि आज से ही 'रजबनामा' अर्थात् राजधर्म का प्रारम्भ हुआ है। ऐसे राजधर्म-प्रवर्तक बादशाह के चरणों में मैं अपने एक प्राण की जगह सौ प्राण निछावर कर सकता हूँ!"...

..."हाँ, महाराज! संसार में सबसे अधिक सुखी और सबसे अधिक दुःखी बादशाह ही है। हृदय असह्य ज्वाला से झुलस रहा हो तब भी हँसते हँसते जो बादशाह बड़े से बड़ा बलिदान कर सके, वही सच्चा बादशाह है! महाभारत की वही बात कहना है जिसे आज आप कह [illegible] ....

..."कृपानिधान, राजा का अर्थ है अकबर बादशाह !"......

"नहीं राजा नहीं !...नहीं !!" अकबर चीख़ उठा। क्षण भर में उसकी आँखों में रुकी हुई आँसुओं की धारा बह उठी। टूटे हुये स्वर में अकबर जैसे कराह रहा था—"बीरबल के बिना बादशाह ज्योतिहीन आँखें हैं—प्राणहीन शरीर हैं! मेरे राजाजी, राजा का मतलब अकबर नहीं, बीरबल होता है—राजा बीरबल !"

सूर्य भी जैसे इस पुरुषसिंह की आँखों में आँसू देख कर असमर्थ सा पश्चिम की ओर तेज़ी से भाग चला। निर्जन, नीरव मकतबखाना एक बार जी भर कर देखने के बाद अकबर धीरे धीरे 'बुलंद दरवाज़ा' की तरफ चल पड़ा।

दरवाज़ा के बाहर की ओर अतग और कल्याणमल घोड़ों को लिए खड़े थे। वहीं खड़े होकर बादशाह ने एक बार शहर की ओर देखा।

साँझ हो चुकी थी और अविचल बादशाह का एकटक उस नष्ट-वैभव नगर फ़तहपुर सीकरी को देख रहा था।

...अद्भुत दृश्य! अद्भुत वातावरण! अद्भुत हृदय है बीरबल के साथी का जिसे दुनिया अकबर बादशाह कह कर पुकारती है!... अद्भुत !!

धीरे धीरे झुक कर बादशाह ने धरती पर से धूल उठाई और बादशाहत की शान समझी जाने वाली अपनी पगड़ी में डाल ली।

तब तुरन्त घोड़े पर सवार होकर वह वहाँ से चल पड़ा। दूर मस्ज़िद में से साँझ के वातावरण को गंभीर बनाने वाली अजान की आवाज़ सुनाई दे रही थी—

"अल्लाहो अकबर ! अल्लाहो अकबर !"